गुरुकुल-पत्रिका

पूर्णाङ्क ९८

सितम्बर १९५६

व्यवस्थापक : श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादक समिति : श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति

श्री शङ्करदेव विद्यालङ्कार

श्री रामेश बेदी (मन्त्री)

इस अङ्क में

अगले अङ्क में

हिमालय की घाटियों में भारतीय संस्कृति	श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति
शिक्षा में व्यवहारवाद	श्री महेशचन्द्र एम ए.
परमाणु के शान्तिपूर्ण उपयोग (सचित्र)	
चम्बल की घाटी की खुदाई से (सचित्र)	

अन्य अनेक विश्रुत लेखकों की सांस्कृतिक, साहित्यिक व स्वास्थ्य सम्बन्धी रचनाएँ ।

मूल्य देश में ४) वार्षिक

विदेश में ६) वार्षिक

एक प्रति

छः आने

ॐ

गुरुकुल-पत्रिका

[गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक पत्रिका]

दर्शन शास्त्रों और गीता का वेद विषयक विचार

श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, वेदान्त और मीमांसा ये छः दर्शन शास्त्र हैं जिन्हें गौतम, कणाद, कपिल, पतञ्जलि, वेद व्यास और जैमिनि नामक ऋषियों ने बनाया। इन सब दर्शनों में वेदों के महत्व को स्पष्टतया स्वीकार किया गया है। उदाहरणार्थ न्याय दर्शन के २. १. ६७. मन्त्रायुर्वेद प्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात् इत्यादि सूत्रों में परमआप्त परमेश्वर का वचन होने और असत्य, परस्पर विरोध और पुनरुक्ति आदि दोष रहित होने से वेद को परम प्रमाण सिद्ध किया गया है।

वैशेषिक शास्त्रकार कणाद मुनि ने तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्। १. १. ३. इस सूत्र द्वारा परमेश्वर का वचन होने से आम्नाय अर्थात् वेद की प्रामाणिकता का प्रतिपादन किया है।

सांख्यकार कपिल मुनि को भूल से कई विचारक नास्तिक समझते हैं किन्तु उन्होंने भी 'निजशक्त्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम्' इत्यादि सूत्रों द्वारा वेदों को ईश्वरीय शक्ति से अभिव्यक्त (प्रकट होने के कारण स्वतः प्रमाण माना है। सांख्य सूत्रों में जगत्कर्ता ईश्वर का 'स हि सर्ववित्, सर्वकर्ता' इत्यादि सूत्रों द्वारा स्पष्ट प्रतिपादन है, अतः कपिल मुनि को नास्तिक समझना बड़ी भूल है।

इस प्रसंग में एक और बात का उल्लेख करना आवश्यक है। वह यह कि कुछ लोग सांख्य दर्शन के 'ईश्वरासिद्धेः'। १. ९२ इस सूत्र के आधार पर यह समझते हैं कि सांख्यकार कपिल मुनि ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते थे। ऐसी अवस्था में 'निजशक्त्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम्' इस का ईश्वरीय शक्ति से वेदों की अभिव्यक्ति और स्वतः प्रमाणता परक अर्थ कैसे ठीक हो सकता है। इस विषय में हम ने अपनी 'बौद्ध मत और वैदिक धर्म' नामक पुस्तक में (आर्यसमाज दीवान हाल द्वारा प्रकाशित और वहीं प्राप्तव्य) पर्याप्त प्रकाश डाला है। यहां इतना ही लिखना पर्याप्त है कि 'ईश्वरासिद्धेः' यह सूत्र प्रत्यक्ष के प्रकरण में आया है जिस का लक्षण कपिल मुनि ने 'यत् सम्बन्धं सत् तदाकारोल्लेखि विज्ञान तत् प्रत्यक्षम्। १.८९ इस रूप में किया है। अतः 'ईश्वरासिद्धेः' का इतना ही अभिप्राय है कि प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा ईश्वर की सिद्धि नहीं हो सकती क्योंकि वह सर्व व्यापक निराकार होने से प्रत्यक्ष का विषय नहीं। साथ ही ईश्वर की उपादान कारणता का 'तद्योगेऽपि न नित्यमुक्तः। प्रधानशक्तियोगाच्चेत् सङ्गापत्तिः। सत्तामात्राच्चेत् सर्वैश्वर्यम्। प्रमाणाभावान्न तत्सिद्धि। संबन्धाभावान्नानुमानम्। श्रुतिरपि प्रधान कार्यत्वस्य॥' पंचम अध्याय के इन सूत्रों में निषेध किया गया है जिन का तात्पर्य यह है कि ईश्वर को इस

सृष्टि का उपादान कारण माना जाएगा तो ईश्वर नित्यमुक्त नहीं रहेगा क्योंकि उपादान कारण मानने से उस में रागादि की प्रवृत्ति माननी पड़ेगी जो नित्यमुक्त में नहीं हो सकती। यदि ईश्वर को जगत् का उपादान कारण माना जाए तो ईश्वर में सर्वज्ञतादि जो गुण हैं वे इस जगत् में भी होने चाहियें क्योंकि उपादान कारण के गुण कार्य में होते हैं किन्तु ऐसा देखने में नहीं आता अतः वह जगत् का उपादान कारण नहीं। प्रत्यक्ष प्रमाण के न होने से भी ईश्वर को जगत् का उपादान कारण नहीं सिद्ध किया जा सकता और न अनुमान प्रमाण द्वारा यह सिद्ध किया जा सकता है कि ईश्वर जगत् का उपादान कारण है। श्रुति भी प्रधान अथवा प्रकृति को ही जगत् का उपादान कारण मानती है।

कहीं इन सूत्रों से यह भ्रम न हो जाए कि सांख्यकार ईश्वर की जगत् के निमित्त कारण के रूप में सत्ता का भी निषेध करते हैं। उन के निम्न सूत्र उल्लेखनीय हैं—

स हि सर्ववित् सर्वकर्ता ॥ सांख्य. ३. ५६।

अर्थात् ईश्वर सर्वज्ञ और निमित्त कारण रूप से जगत् का कर्ता है।

ईदृशेश्वरसिद्धिः सिद्धा ॥ सांख्य ३. ५७।

ऐसे जगत् के निमित्त कारण रूप सर्वज्ञ ईश्वर की सिद्धि सिद्ध है।

व्यावृत्तोभयरूपः। सांख्य १. १६।

वह ईश्वर प्रकृति और पुरुष (आत्मा) दोनों से भिन्न स्वरूप वाला है। इत्यादि।

सांख्य शास्त्र निरीश्वरवाद का प्रतिपादक नहीं किन्तु इस में नित्य ब्रह्म की सत्ता का प्रतिपादन है इस बात का महाभारत शान्ति पर्व मोक्षधर्म पर्व अ. ३०१ में भी स्पष्ट प्रतिपादन है यथा।

अत्र ते संशयोमाभूत्, ज्ञानं सांख्य परं मतम्।
अक्षरं ध्रुवमेवोक्तं, पूर्णं ब्रह्म सनातनम् ॥
अनादिमध्यनिधनं, निर्द्वन्द्वं कर्तृशाश्वतम्।
कूटस्थं चैव नित्यं च, यद्वदन्ति मनीषिणः ॥
शान्तिपर्व मोक्षधर्म पर्व अ. ३०१. १०१ १०।

महाभारत शान्ति पर्व (मोक्षधर्म पर्व) अ. २७ में कपिल के निम्न वचन भी द्रष्टव्य हैं जिन से उन की वेद और ब्रह्म दोनों पर पूर्ण निष्ठा स्पष्टतया ज्ञात होती है।

वेदाः प्रमाणं लोकानां. न वेदा. पृष्ठतः कृताः।
द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परं च यत् ॥१
शब्दब्रह्मणि निष्णातः, परं ब्रह्माधिगच्छति ॥२

अर्थात् वेद समस्त लोगों के लिए प्रमाण हैं। उन्हें पीछे से नहीं बनाया गया। ब्रह्मपद-वाच्य दो का ज्ञान आवश्यक है एक तो वेद और दूसरा परब्रह्म-परमेश्वर। जो शब्दब्रह्म अर्थात वेद में निपुण है वह परब्रह्म को प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार कपिल मुनि की नास्तिकता का पूर्ण निराकरण होता है।

योगदर्शनकार पतंजलि मुनि ने 'स एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।' समाधिपाद सू. २६ इत्यादि में परमेश्वर को नित्य वेद ज्ञान देने के कारण सब पूर्वजों का भी आदि गुरु माना है।

वेदान्त शास्त्र के कर्ता वेदव्यास जी ने शास्त्रयोनित्वात् १. १. ३ तथा अतएव च नित्यत्वम् १ ३. २६. इत्यादि सूत्रों द्वारा परमेश्वर को ऋग्वेदादि रूप सर्वज्ञानभण्डार शास्त्र का कर्ता मानते हुए वेद की नित्यता का प्रतिपादन किया है। 'शास्त्रयोनित्वात्।' इस सूत्र के भाष्य में सुप्रसिद्ध दार्शनिक श्री शङ्कराचार्य जी ने जो लिखा है वह भी इस प्रसंग में महत्त्वपूर्ण होने के कारण उल्लेखनीय है। वे लिखते हैं—

'ऋग्वेदादेः शास्त्रस्यानेकविद्यास्थानोपबृंहि-

तस्य प्रदीपवत् सर्वार्थावद्योतिनः सर्वज्ञकल्पस्य योनिः कारणं ब्रह्म। नहीदृशस्यर्ग्वेदादिलक्षणस्य सर्वज्ञगुणान्वितस्य सर्वज्ञादन्यत सम्भवोऽस्ति॥

अर्थात् ऋग्वेदादि जो चार वेद हैं वे अनेक विद्याओं से युक्त हैं, सूर्य के समान सब सत्य अर्थों के प्रकाश करने वाले हैं, उन का बनाने वाला सर्वज्ञत्वादि गुणों से युक्त परब्रह्म है क्यों कि सर्वज्ञ ब्रह्म से भिन्न कोई जीव, सर्वज्ञगुणयुक्त इन वेदों को बना सके ऐसा सम्भव नहीं इत्यादि। मीमांसा शास्त्र के कर्ता जैमिनि मुनि तो धर्म का लक्षण ही यही करते हैं कि—

'चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः।'

अर्थात् जिस के लिये वेद की आज्ञा हो वह धर्म और जो वेद विरुद्ध हो वह अधर्म कहलाता है।

इस प्रकार समस्त शास्त्र एक स्वर से वेदों की नित्यता और स्वतः प्रमाणता का प्रतिपादन करते हैं।

गीता के कुछ वचन

भगवद्गीता एक जगद्विख्यात महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। यद्यपि वह महाभारतान्तर्गत है और महाभारत के वेदों के महत्व विषयक कुछ श्लोकों को हम उद्धृत कर चुके हैं। तथापि गीता के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ होने के कारण उस के वेद विषयक कुछ श्लोकों का उल्लेख करना इस प्रकरण में हमें उचित प्रतीत होता है। गीता के तृतीय अध्याय में श्रीकृष्ण महाराज ने यज्ञ के विषय का निरूपण करते हुए कहा है—

अन्नाद् भवन्ति भूतानि, पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यः, यज्ञः कर्मसमुद्भवः।
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम्॥
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म, नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्॥
भगवद्गीता ३. १४. १५।

अर्थात् प्राणियों का जीवन अन्न पर निर्भर है। मेघों से अन्न की उत्पत्ति होती है। मेघ यज्ञ से बनते हैं। यज्ञ कर्म से सम्पन्न होता है। धर्म-कर्म की उन्नति वा ज्ञान ब्रह्म अर्थात् वेद के द्वारा होता है। वह ब्रह्म अर्थात् वेद अक्षर वा अविनाशी परमेश्वर से आविर्भूत होता है इस लिये सर्वव्यापक परमेश्वर को सदा यज्ञ में प्रतिष्ठित जानो। इस श्लोक में वेदों की उत्पत्ति अविनाशी परमेश्वर से स्पष्टतया बताई गई है।

इस श्लोक के भाष्य में श्री शङ्कराचार्य जी ने लिखा है –

कर्म (ब्रह्मोद्भवम्) ब्रह्म वेदः स उद्भवः कारणं यस्य तत् कर्म ब्रह्मोद्भवं (विद्धि) जानीहि ब्रह्म पुनर्वेदाख्यम् अक्षरसमुद्भवम्) अक्षरं ब्रह्म परमात्मा समुद्भवो यस्य तदक्षरसमुद्भवं ब्रह्म वेद इत्यर्थः। यस्मात् साक्षात्परमाख्यादक्षरात् पुरुषनिश्वासवत् समुद्भूतं ब्रह्म-तस्मात् सर्वप्रकाशकत्वात् सर्वगतम्। सर्वगतमपि सन्नित्यं सदा यज्ञविधिप्रधानत्वात् यज्ञे प्रतिष्ठितम्। भगवद्गीता शाङ्कर भाष्ये अ. ३. १५।

'श्रीमद्भगवद्गीता शाङ्कर भाष्यादिसप्तटीकोपेता' गुजराती मुद्रणालय, मुम्बई पृ० १८१ तात्पर्य यही है कि कर्म की उत्पत्ति वेद से और वेद की अविनाशी परमात्मा से है। वेद साक्षात् परमात्मा से पुरुषश्वास की तरह निकला है अतः सब विषयों का प्रकाशक होने के कारण उसे ही सर्वगत कहा है। वह सर्वगत ब्रह्म (वेद) यज्ञ विधि प्रधान होने से यज्ञ में प्रतिष्ठित है।

श्री आनन्दतीर्थ (मध्वाचार्य) के भाष्य में यद्यपि इस श्लोक की व्याख्या शाङ्कराचार्य जी के भाष्य से भिन्न की गई है तथापि वेदों की नित्यता और ईश्वरीयता को—

तानि चाक्षराणि नित्यानि 'वाचा विरूप नित्यया। वृष्णे चोदस्व सुष्टुतिम्॥' अनादि-

निधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा। अत एव च नित्यत्वम्। इत्यादि श्रुतिस्मृतिभगवद्वचनेभ्यः॥ न च सर्वज्ञत्वे यदि वदस्रष्टा किमिति न जगत् स्रष्टासर्वज्ञ तस्माद् वेदप्रमाणकत्वमेवात्र विवक्षितम् अतो नित्यान्यक्षराणि यतएवं परम्परया यज्ञाभिव्यङ्ग्यं ब्रह्म तस्मान्नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्॥'

इत्यादि शब्दों द्वारा उस में भी स्पष्ट माना गया है। इस की पुष्टि वेद की अन्तः साक्षि 'वाचाविरूप नित्यया' महाभारत के वचन अनादिनिधना नित्या तथा वेदान्त सूत्र 'अत एव च नित्यत्वम्' इन के उद्धरणों से की गई है। रामानुज भाष्य की अमृत तरङ्गिणी टीका में भी—

वेदात् कर्मोत्पत्तिः स च ब्रह्मनिःश्वासस्तेन तथा। ब्रह्मणः पुरुषोत्तमत्वज्ञापनार्थं विशिनष्टि अक्षरसमुद्भवम्। अक्षरस्य समुद्भवो यस्मात् तादृशम्।

इत्यादि वचनों द्वारा वेद की नित्यता का प्रतिपादन है। नीलकण्ठी टीका में तो और भी भी स्पष्ट रूप से, इस श्लोक की टीका में लिखा है—

कर्म (ब्रह्मोद्भवं) वेदोद्भवं वेद एव धर्मे प्रमाणं न तु पाखण्डादिप्रणीतागमः। ब्रह्म वेदोऽपि अक्षरसमुद्भवम्। अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेदः' इत्यादि श्रुतेः। साक्षात्परमेश्वरादेवोत्पन्नोऽतो न तत्र भ्रमविप्रलम्भत्वादिदोषाक्रान्तपाखण्डादिवाक्यवदप्रामाण्य-शङ्कास्तीति भावः। यस्मादेवं तस्मात् सर्वस्मिन् देशे कालेच वर्तमानं ब्रह्म-वेदः एतेन वेदस्य नित्यत्वं शब्दस्य विभुत्वं च दर्शितं नित्यं नियमेन यज्ञे प्रतिष्ठितं तात्पर्येण पर्यवसन्नम् नीलकण्ठी टीका पृ० १८३।

अर्थात् कर्म के विषय में वेद प्रमाण है और वेद की उत्पत्ति परमात्मा से है अतः उस की प्रामाणिकता में कोई सन्देह नहीं हो सकता। इत्यादि।

गीता के सप्तदश (१७ वें) अध्याय में 'ओं तत्सत्' इस नाम से ब्रह्म का निर्देश करते हुए श्लोक २३ में कहा है कि—

ओं तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च, यज्ञाश्च विहिताः पुरा॥

अर्थात् ब्रह्म का 'ओं तत् सत्' इन नामों से शास्त्रों में निर्देश किया गया है। उसी से ब्राह्मणों (ब्रह्मज्ञानी वेद वेत्ताओं) वेदों और यज्ञों का विधान किया गया है अर्थात् वेद के अध्ययनाध्यापन में दिन-रात तत्पर ज्ञानी परमेश्वर के सच्चे भक्त उस के बड़े पुत्र कहलाते हैं। वेदों का उसी ब्रह्म ने उपदेश दिया है जिन के द्वारा ही यज्ञकर्म चलते हैं अत. इन तीनों की उत्पत्ति विशेष रूप से उस परमेश्वर से मानी गई है। इस श्लोक में भी वेदों को स्पष्टतया ईश्वरीय बताया गया है।

★

- सन् १९५५-५६ में भारत से १३.६३ लाख टन कच्चे लोहे का निर्यात हुआ। इस का मूल्य ६.२७ करोड़ रु० आंका गया था।
- सन् १९५४ में चाय के निर्यात उप-कर से १,५८,७५,६७६ रु० प्राप्त हुआ। पिछले वर्ष इस मद से १,२८,५२,५८० की आमदनी हुई थी। इन रकमों में कर वसूली का खर्च शामिल नहीं है।
- दूसरी पंचवर्षीय आयोजना की अवधि में १०० प्रकाश स्तम्भ बनाने का प्रस्ताव है।—

भारत का महान् लेखक—प्रेमचन्द

श्री वी० बालिन

भारत के विख्यात् लेखक प्रेमचन्द की कृतियां अपनी जनता के प्रति निष्ठापूर्ण सेवा का उज्ज्वल एवं उदात्त दृष्टांत हैं। उन की कृतियां हिन्दी और उर्दू साहित्य की क्लासिक बन गई हैं।

प्रेमचन्द कहते थे कि 'उत्पीड़ित का समर्थन एवं रक्षण करना' लेखक का कर्तव्य है। यावज्जीवन उन्होंने अपने नागरिक कर्तव्य का पालन किया और इस प्रकार जनता के एक सच्चे लेखक के रूप में गौरव प्राप्त किया।

वर्तमान शती के आरम्भ में भारत एक औपनिवेशिक देश था। श्रमिक जनता, विशेषकर कृषकवर्ग की कठिन परिस्थिति विविध सामन्ती अवशेषों के कारण जिन्हें सुरक्षित रखना उपनिवेशवादियों ने लाभदायक समझा था और भी अधिक खराब हो गई थी। भारतवासियों को न्यूनतम राजनीतिक अधिकार भी नहीं प्राप्त थे। जनता को पूर्ण पराधीनावस्था में रखने के प्रयास से विदेशी शासकों ने कठोर सम्वाद-नियन्त्रण और पुलिस आतङ्क का सहारा लिया। भारत में उपनिवेशवादियों की निरंकुशतापूर्ण पद्धतियों के विरुद्ध जनता का क्रोध अबाधगति से बढ़ता गया। राष्ट्रीय चेतना का भाव उत्तरोत्तर ज़ोर पकड़ता गया। १९०५–१९१० के राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन में भारत की जनता ने दासता की बेड़ियों को उतार फेंकने के लिए ज़ोरदार प्रयास किया। इसी काल में प्रेमचन्द का साहित्यिक जीवन शुरू हुआ।

बचपन से ही लेखक ने (इन का असली नाम धनपतराय श्रीवास्तव था) जनता के दुःख क्लेश देखे थे। वे गांव के पटवारी के पुत्र थे। उन्होंने स्वयं कठिन अभाव का अनुभव किया था। वे भूख और बेकारी से परिचित थे। कठिन प्रयास करने के बाद वे किसी तरह शिक्षा प्राप्त करने में सफल हुए थे। वे एक स्कूल में शिक्षक बन गये और इस प्रकार साहित्य के क्षेत्र में उन्होंने अपने प्रथम पग रखे। पत्रकारिता सम्बन्धी कार्य के द्वारा वे राजनीतिक संघर्ष के उद्दीप्त वातावरण में आ गये।

प्रेमचन्द के 'सोज़ेवतन' नामक प्रथम कहानी-संग्रह में भी हम घृणित औपनिवेशिक व्यवस्था के पर्दाफाश के साथ-साथ अपने देशवासियों के नाम प्रेमचन्द की मार्मिक अपील पाते हैं जिस में उन्होंने देश के गौरव के लिए कुछ भी नहीं उठा रखने और अपने प्राणों की बाजी लगा देने के लिए उनका आह्वान किया है। ब्रिटिश सत्ताधारियों के आदेशानुसार यह पुस्तक 'राजद्रोहात्मक' घोषित की गई और जला दी गई। प्रेमचन्द को कठोर दण्ड देने की धमकी दी गयी, लेकिन इस से वे अपने विचार से नहीं डिगे। उन्होंने देखा कि सच्ची बातों से उन की मातृभूमि के उत्पीड़कों के अन्दर हड़कम्प पैदा होता है और जनता की जागरूकता को बढ़ाने में मदद मिलती है। अविचलित भाव से उन्होंने भारत को मुक्त करने के लक्ष्य में अपने को लगा दिया। वे इस लक्ष्य के प्रति अपने जीवन के अन्त तक सच्चे बने रहे।

प्रमचन्द की रचना सर्वाधिक उल्लेखनीय विशिष्टता जो शुरू से ही देखने में आती है वह यह है कि वे अपने विषय-वस्तु एवं पात्रों का चयन सामान्य जनता के जीवन से करते थे।

किसान, शहर के गरीब, तथा बुद्धिजीवी वर्ग के वित्तहीन तबकों के बारे में अपनी जान-

कारी तथा उन के प्रति अपनी गहरी सहानुभूति की बदौलत वे उन समस्याओं को अपने हाथ में ले सके जो हिन्दी और उर्दू रचना के लिए नयी थीं। श्रमशील मानव जो पददलित एवं दुखी होते हुए भी निष्ठावान और शुद्धहृदय है भारत के नूतन साहित्य का मुख्य पात्र बन गया। अपनी समस्त अग्नि-परीक्षाओं के अन्दर प्रेमचन्द की कृतियों के नायक सत्य की विजय में, निरंकुशता के ऊपर न्याय की जीत में अमर विश्वास रखते हैं। यह उज्ज्वल मानवतावाद देश प्रेम के उन भावों से जो उन दिनों में भारत में हिलोरें ले रहे थे पूर्ण मेल खाता था।

प्रेमचन्द की रचनाओं ने उन्हें एक लेखक के रूप में प्रख्यात कर दिया। इस का मुख्य कारण यह है कि राजनीतिक जागरण की दिशा में व्यापकतम जनसमुदाय के अविनाशी प्रयास को पकड़ने और मूर्त करने में वे सफल हुए, जब लेनिन के शब्दों में पूर्व के औपनिवेशिक देशों की कोटि-कोटि उत्पीड़ित जनता में जो मध्य युगीन गतिहीनता के कारण नितांत अप्रगतिशील हो गई थी नवजागरण अङ्गड़ाई लेने लगा, और वह प्राथमिक मानव अधिकारों और जनवाद के लिए संघर्ष करने को उद्यत हो गई। व्यापक जनसमुदाय के जीवन का साहित्य में सच्चा चित्रण राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन सम्बन्धी कार्यों के अनुकूल था।

प्रेमचन्द की रचनाओं में व्यापक पैमाने पर वैविध्यपूर्ण सामाजिक विषय वस्तु पाई जाती है। उन में परिवार और समाज के अन्दर स्त्रियों के स्थान को प्राधान्य दिया गया है, तथा स्त्रियों को पतित करने वाली सामाजिक रूढ़ियों और और कठोर रीति-रिवाजों की निन्दा की गई है।

अपने व्यङ्ग्यपूर्ण पात्रों के द्वारा उन्होंने बड़े सशक्त ढङ्ग से सरकारी कर्मचारियों और जमींदारों की बखिया उधेड़ी है, जो उन के देशवासियों का निर्मम शोषण और लूटपाट करते थे।

अपनी बहुत सी रचनाओं में प्रेमचन्द ने भारतीय कृषकवर्ग के जीवन का चित्रण किया है। वे भारतीय किसान के आत्मिक गठन तथा उन जटिल सामाजिक प्रक्रियाओं में जो गांवों में हो रही थीं दिलचस्पी रखते थे। उन्होंने भारतीय गांव का अविस्मरणीय चित्र—सच्चा जीवन्त इतिहास प्रस्तुत किया है, जहां भूमिहीन किसान हैं, फसल मरने और अकाल पड़ने की दुर्घटनाएं होती हैं, निरंकुश जमींदारों और अर्थलोलुप सूदखोरों का जोर है, पुलिस आतङ्क पैदा करती है और सरकारी कर्मचारी लूट-खसोट करते हैं।

१९१८–१९२२ में जब जनता का साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष अपने शीर्षबिन्दु पर था प्रेमचन्द ने 'प्रेमाश्रम' नामक उपन्यास और 'संघर्ष' नामक नाटक लिखा। इन कृतियों में उन्होंने एक पिछड़े हुए, कृषि प्रधान एवं औपनिवेशिक देश में तत्कालीन राष्ट्रीय-मुक्ति आंदोलन की मुख्य विशिष्टताओं और अन्तर्विरोधों का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने दिखलाया है कि किस तरह नौकरशाही प्रशासनिक यन्त्र तथा गावों में सामन्ती पद्धति के संयोजन पर आधारित औपनिवेशिक व्यवस्था अन्दर अन्दर सड़ गई थी और इतिहास द्वारा अभिशप्त घोषित कर दी गई थी। परन्तु औपनिवेशिक उत्पीड़न के विरुद्ध कृषकवर्ग की स्वतःस्फूर्त कार्यवाहियों के साथ-साथ प्राचीन पितृसत्ताक कृषक समाज के सम्बन्धों का एक आदर्श के रूप में गुणगान किया गया है। इन भावों का चिन्तन करते हुए प्रेमचन्द इस विचार की ओर झुक गये थे कि यदि अच्छे दृष्टान्तों द्वारा उन लोगों

को जो स्वार्थ के वशीभूत हो सत्ता हथियाए हैं समझाने-बुझाने और पुनः शिक्षित करने का प्रयास किया जाए तो बहुत सी सामाजिक बुराइयां दूर की जा सकती हैं। सिद्धान्त पक्ष में अन्तर्विरोध के बावजूद इस उपन्यास का भारी महत्व है। यह दिखाता है कि किस तरह अत्यन्य पिछड़े हुए किसानों के मस्तिष्क में यह विचार क्रमशः बद्धमूल होता गया कि जमींदारों और सूदखोरों से संघर्ष करना आवश्यक है। भारत में यह प्रथम वृहत साहित्यिक रचना थी जिस में भारतीय जीवन की मुख्य समस्याओं का और सर्वोपरि श्रमिक जनता की स्थिति का इतना गम्भीर एवं यथार्थतापूर्ण चित्रण किया गया है।

प्रेमचन्द के हित स्वतन्त्रता के लिए संघर्षशील उनकी मातृभूमि के हित से सदा अभिन्न रूप में जुड़े थे। उनके सिद्धान्त तथा राजनीतिक विचारों में स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए जनसंघर्ष की उठती हुई लहर प्रतिबिम्बित होती थी। १६२० के सविनय अवज्ञा आंदोलन के समय उन्होंने ब्रिटिश संस्थानों का बायकाट करने के लिए किये गये देशभक्तिपूर्ण आह्वान का पालन किया और उस पद से त्यागपत्र दे दिया जिस की वजह से वे आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त थे। तदनन्तर उन्हें बहुधा अभाव और दुःख-दारिद्य का सामना करना पड़ा लेकिन वे फिर सरकारी नौकरी में नहीं गये।

जब १६२८-१६३३ में भारत के राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन का एक नया दौर शुरू हुआ तो प्रेमचन्द पहले की ही तरह अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए जूझने वालों की प्रथम पंक्ति में पाये गये।

उस काल में उन की साहित्यिक रचना का असाधारण विकास हुआ। उन्होंने उपन्यास, लघुकथाएं, और लेख लिखे; उन्होंने फिल्मों में काम किया, प्रगतिशील साहित्यकारों को संघटित करने के प्रयास में उन्होंने अन्य लेखकों के साथ सजीवतापूर्ण पत्राचार किया।

अपने जीवन के सन्ध्याकाल में इस मानववादी एवं जनवादी लेखक की कृति में उस का ऊर्जस्व स्वर और भी सशक्त होता गया और हिन्दी तथा उर्दू साहित्त में समीक्षात्मक यथार्थवादी पद्धति की विजय का प्रतीक बन गया।

उन्होंने बहुत से सामाजिक भ्रमों से अपने को मुक्त किया। 'गोदान (१६३६) के पात्रों के जीवन हमें यह दिखाते हैं कि यदि कोई केवल अपने नैतिक मूल्यों पर अपनी आशाएं केन्द्रित करे और निरंकुशता के विरुद्ध संघर्ष करने के बजाय उस से मेल-समझौते करे तो वह वास्तविक खुशहाली और सुख-समृद्धि नहीं प्राप्त कर सकता। इस उपन्यास का मुख्य पात्र होरी जो एक गरीब किसान है अच्छे दिनों की व्यर्थ में प्रतीक्षा करते-करते इस संसार से कूच कर जाता है। उस की न्यूनतम आशाएं भी पूरी नहीं हुई। वह ईमानदार, दयालु और समझदार व्यक्ति है लेकिन उस समाज के नियम जिस में वह रहता है अत्यन्त निर्मम हैं। वह अपने भाग्य का निर्माण करने के लिए संघर्ष करने की कोशिश नहीं करता और वह कोटि-कोटि श्रमिक जनता के शोषण पर आधारित सामाजिक पद्धति का शिकार हो जाता है।

प्रेमचन्द की रचनाओं के गम्भीर सामाजिक तत्व—देशप्रेम और यथार्थवाद का समस्त भारत के बहुभाषायी साहित्य पर भारी प्रभाव पड़ा है, वह भारत के सब से प्रमुख राष्ट्रीय यथार्थवादी लेखकों में परिगणित हुए, उन की जनवादी परम्परायें आज दिन तक संजोई हैं और उनका विकास हो रहा है

प्रेमचन्द अखिल भारत प्रगतिशील लेखक

संघ के संस्थापक थे। इस संघ का प्रथम अधिवेशन अप्रैल १९३६ में उन्हीं की अध्यक्षता में हुआ था।

प्रेमचन्द ने व्यापक जनसमुदाय के लिए अपने साहित्य को सुबोध एवं सुलभ बनाने के लिए बहुत कुछ किया। इस उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए उन्होंने बोलचाल की एकमात्र हिन्दुस्तानी भाषा के दो साहित्यक रूपों—हिन्दी और उर्दू को सामान्य जनता के धरातल पर एक साथ लाने का प्रयास किया। एक साहित्यकार तथा जनता की भाषा के शिल्पकार के रूप में वे आज दिन तक भारत के लेखकों के गुरू हैं।

प्रेमचन्द की रचनाओं ने उन मुक्तिकामी धाराओं को आगे बढ़ाया जिनका उदय भारतीय साहित्य में १९ वीं शती में हुआ था। प्रेमचन्द ने इस दृष्टि से अपने देश की बहुमूल्य सेवा की कि उन्होंने साहित्य में सामान्य जनता की आशाओं एवं आकांक्षाओं को व्यक्त किया कि उन्होंने अपनी रचनाओं को राष्ट्रीय एवं सामाजिक स्वतन्त्रता के लिए होने वाले जन-संघर्ष से अविच्छिन्न रूप में जोड़ दिया।

वह प्रगाढ़ रूप में एक राष्ट्रीय लेखक थे। अन्य राष्ट्रों की संस्कृति के प्रति उन के हृदय में भारी सम्मान था। उन्होंने बर्नार्ड शा, अनातोल फ्रांस, गाल्सवर्दी और सादी की कृतियों का हिंदी में अनुवाद किया, हिन्दी के पाठकों को लियो टाल्सटाय की रचनाओं से परिचित कराने वाले वे पहले व्यक्ति थे, मैक्सिम गोर्की के लिए उनके दिल में सब से अधिक सम्मान था।

साम्राज्यवादी एवं सामन्ती उत्पीड़न की बेड़ियों को काटने में अपने देश की जनता के साथ कन्धे से कन्धा भिड़ाये वे आशापूर्ण दृष्टि से मुक्त श्रम के देश सोवियत संघ की ओर देखते थे। उन्होंने मुक्त जातियों द्वारा सोवियत संघ में निर्मित नूतन समाजवादी समाज तथा नूतन संस्कृति का स्वागत किया।

प्रेमचन्द का देहावसान ८ अक्तूबर १९३६ को हुआ। उनकी साहित्यिक देन विशाल है। वे भारत के ही नहीं वरन् समस्त मानवजाति की विभूति हैं।

★

१९५६ में नीबू की किस्म के फलों का उत्पादन

अमेरिकी कृषि-विभाग द्वारा एकत्र किये गये आंकड़ों के अनुसार, नींबू की किस्म के फलों के १९५५–५६ के उत्पादन से प्रकट होता है कि इन के उत्पादन में गत वर्षों की तुलना में काफी वृद्धि हुई है। अनुमान है कि उत्तरी गोलार्द्ध में सन्तरे तथा माल्टा के २६ करोड़ ७० लाख बक्से उतरे, जो गत वर्ष से ६ प्रतिशत अधिक रहे। गत वर्ष सन्तरे तथा माल्टा के २८ करोड़ १० लाख बक्से उतरे थे। चकोतरे के उत्पादन में भी वृद्धि हुई है। १९५४–५५ में ४ करोड़ ७० लाख बक्से उतरे थे और इस ऋतु में ५ करोड़ १० लाख बक्से उतरे हैं। गत वर्ष संसार में नींबू के ४६ लाख बक्स उतरे थे। उत्तरी गोलार्द्ध में गत वर्ष नींबू के २ करोड़ ७० लाख बक्से उतरे थे। इस वर्ष भी लगभग उतना ही उत्पादन रहा है। संसार में नींबू की किस्म के फलों की जितनी पैदावार होती है उस का ७५ प्रतिशत भाग उत्तरी गोलार्द्ध में होता है। दक्षिणी गोलार्द्ध के १९५५–५६ के आंकड़े मौजूदा फसल के तैयार हो जाने तक प्राप्त नहीं हो सकेंगे।

—

मस्तिष्क और टेलीविज़र

श्री आर. जेड. अमीरोव, एम. डी., एम. एस सी.

शरीर में जीवन सम्बन्धी कार्य-कलाप की अभिव्यक्ति जैसे हृदय के धड़कने, रग-पुट्ठों के सिकुड़ने, मस्तिष्क के बाहरी भाग के स्फुरण के साथ-साथ सदा एक प्रकार की बिजली निकला करती है जिसे जैव विद्युत-तरंग कहते हैं।

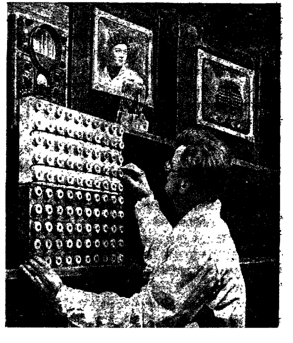
जब अङ्ग आराम करते रहते हैं, तब बहुत ही कमजोर विद्युत्-तरंग उठती है। परन्तु जब तन्तुओं और अङ्गों की विश्राम की स्थिति में व्याघात पड़ता है, तब तरङ्ग काफी प्रबल हो जाती है।

मानव-शरीर से उठने वाली विद्युत्-तरंग एक वोल्ट के सौवें भाग के बराबर होती है, जब कि कुछ मछलियों में यह कई सौ वोल्ट तक पहुंच जाती है। उदाहरण के लिये, वैद्युतिक ईल मछली अपनी बिजली चालू कर के आदमी को मार सकती है।

हृदय की विद्युत-तरंग की चाप १ से १॥ मिलीवोल्ट (वोल्ट के हजारवें भाग) के बराबर होती है। मस्तिष्क की विद्युत्-तरंगों की चाप इस से बीस गुना कमजोर होती है।

मस्तिष्क के इन वैद्युतिक कार्यों का अध्ययन अब से बहुत पहले १८७४ में रूसी वैज्ञानिक वी जे दानिलेव्स्की ने किया था और बाद में सेचेनोव, व्वेदेन्स्की, काउफमान, प्राव्डिचनमिस्की आदि रूसी वैज्ञानिकों ने किया। कुछ काल के उपरांत एन. ई. व्वेदेन्स्की ने सिद्ध किया कि रग-पुट्ठों, स्नायुओं तथा मस्तिष्क जैव तरंगों को टेलीफोन की सहायता से सुना भी जा सकता है।

प्रथम अनुसन्धानकर्ताओं ने जैव तरंगों के अध्ययन के लिए स्पन्दनशील गैलवनोमीटरों का उपयोग किया। इन यन्त्रों के द्वारा केवल कमजोर तरङ्गों की माप सम्भव हुई। ओसिलोग्राफ



नामक यन्त्र के आविष्कार से मस्तिष्क के वैद्युतिक कार्यों का अध्ययन क्षेत्र काफी विस्तृत हो गया। यह यन्त्र विद्युत तरंग के उतार-चढ़ावों को अङ्कित करता है। इस समय ओसिलोग्राफों का उपयोग बीमारियों के निदान में होता है, जैसे मस्तिष्क की गिल्टी का निदान।

मस्तिष्क की जैव तरंगों के अङ्कन को वैद्युतिक एनसेफालोग्राम कहते हैं। इस में लहर जैसी टेढ़ी-मेढ़ी रेखा बन जाती है। स्वस्थ अर्धवयस्क लोगों में ये लहरें आम तौर से एक सेकेंड में १० ओसिलेशन के हिसाब से बनती हैं। यदि मस्तिष्क में कोई बीमारी हुई तो वैद्युतिक एनसेफालोग्राम में परिवर्तन हो जाता है। इसलिए, जहां गिल्टी होती है, वहां जैव तरंगे प्रायः नहीं उठतीं, जब कि इस के इर्दगिर्द उन का जोर औसत से अधिक रहता है तथा उनके ओसिलेशन मन्द होते हैं।

मस्तिष्क की जैव तरंगें व्यक्ति की स्नायविक अवस्था तथा उस की मानसिक चाप व्यक्त करती हैं। ध्वनि तथा प्रकाश के कारण होने वाली उत्तेजना के फलस्वरूप उन में परिवर्तन होता है। इसलिए जिस व्यक्ति की परीक्षा करनी होती है, उसे ऐसे अन्धेरे कमरे में रखते हैं जिस में ध्वनि का प्रभाव न हो तथा बिजली के हस्तक्षेप से भी मुक्त हो।

हाल में वैज्ञानिकों ने मस्तिष्क की जैव तरंगों के अध्ययन के लिए एक साथ २५ विस्तारकों (ऐम्प्लीफायर) का उपयोग करना आरंभ किया है। प्रत्येक विस्तारक में नियन (गैस विशेष) की बत्ती लगी रहती है जो प्रबल जैव तरंगे उठने पर जल उठती हैं। इस से मस्तिष्क के अनेक भागों के वैद्युतिक कार्यों का एक साथ ठीक-ठीक अध्ययन सम्भव हो गया है।

सोवियत संघ के असाधारण वैद्युतिक शरीर विज्ञानविद् प्रोफेसर एम. एन. लीवानोव तथा इञ्जीनियर वी. एम. अनान्येव ने एक नया यन्त्र तैयार किया है जिस से मस्तिष्क के पचास स्थानों को जैव तरंगों का एक साथ अध्ययन किया जा सकता है।

वैज्ञानिक मस्तिष्क के अनेक स्थानों की जैव तरंगों का अध्ययन करने का प्रयत्न करते हैं, क्योंकि इस से मस्तिष्क के कार्य के बारे में और भी पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है। परन्तु अनेक विस्तारक लगाने से बहुत ही जटिल ढङ्ग के यन्त्र बनाने पड़ते हैं। लीवानोव और अनान्येव ने जैव तरंगों के अध्ययन का जो उपाय बतलाया है, उस में यन्त्र का ढांचा बहुत सरल हो जाता है। यह टेलीविजन के सिद्धान्त पर आधारित है और इसे किसी हद तक मस्तिष्क टेलीविजर' माना जा सकता है। मस्तिष्क की जैव तरंगों को टेलीविजर ग्रहण करता है और वे ५० प्रकाशमान बिन्दुओं के रूप में उस के पर्दे पर प्रतिफलित होती हैं। बिन्दु एक के बाद एक जल उठते हैं। यह कार्य बड़ी तेजी से होता है और दो बिन्दुओं के जलने के बीच का समय आखों से देखा नहीं जा सकता। पर्दे पर निरन्तर जलते बिन्दु दिखायी देते हैं। जिस व्यक्ति की परीक्षा की जाती है, उस के सिर इलेक्ट्रोड (विद्युत द्वार) लगाने से वैज्ञानिकों को यह ज्ञान हो जाता है कि मस्तिष्क के बाहरी भाग में जैव तरंगों के वितरण की क्या स्थिति है।

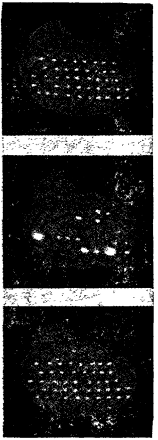
पर्दे के बिन्दुओं की चमक बराबर बदलती रहती है। यह चित्र मस्तिष्क के बाहरी भाग के उत्तेजित और अवरुद्ध स्थानों को ठीक-ठीक दिखला देता है, यह चित्र आई. पी. पावलोव के शब्दों में पच्चीकारी जैसा होता है। इस यन्त्र की सहायता से इसे ठीक-ठीक देखा जा सकता है। यन्त्र प्रकाशमान बिन्दुओं की चित्रकारी के

द्वारा जिस में बिन्दु जलने और बुझ जाते हैं, स्पष्ट दिखला देता है।

जब एक बिन्दु अधिक चमकदार हो जाता है तब इस के इर्दगिर्द के बिन्दु अधिक धुन्धले हो जाते हैं। यह पावलाव का व्याप्ति-मूलक नियम व्यक्त करता है, मस्तिष्क के एक भाग में उत्तेजना दूसरे स्थलों में अवरोध उत्पन्न करती है। बाहरी या भीतरी वातावरण से मस्तिष्क में आने वाले संकेतों से उत्तेजना होती है। स्नायविक उत्तेजना के साथ-साथ जैव तरंगें दिखलाई पड़ती हैं, अर्थात् मस्तिष्क के उत्तेजित भाग में ऋणात्मक बिजली चालू हो जाती है। इसी कारण से पर्दे पर बिन्दु तेजी से चमकने लगते हैं।

आदमी कक्ष में घुसता है और एक सुखद आराम कुर्सी पर बैठ जाता है। पचास बत्तियों वाले इलेक्ट्रोड उस के सिर से लगा दिए जाते हैं। कुछ समय उसे विश्राम करने दिया जाता है। तब अनुसन्धान करने वाला कर्मी उस से मन ही मन गणित का कोई प्रश्न हल करने को कहता है, जैसे दो अङ्कों का गुणा करिये। पर्दे पर एक के बाद एक बिन्दु चमक उठते हैं तथा दूसरे बिन्दु और भी धुन्धले रूप में चमकने लगते हैं। ज्यों ही सवाल हल हो जाता है, पर्दे पर बिन्दुओं का चमकना बन्द हो जाता है। पावलोव ने जब यह कहा था : 'अगर हम खोपड़ी के अन्दर देख सकें, और अगर मस्तिष्क मण्डल का वह स्थान जहां दृष्टि स्नायु की उत्तेजना होती है, चमक सके, तो हम विचार करते हुए सचेत मानव में यह देखेंगे कि उस के मस्तिष्क मण्डल में किस प्रकार एक अद्भुत ढंग से अनियमित प्रकाशमान वस्तु घूम रही है और वह निरन्तर अपना रूप बदल रही है, बाकी मस्तिष्क मण्डल में उस के चारों ओर कमोवेश काफी अन्धेरा है।' तो उस की प्रतिभा ने इस बात को पहले ही भांप लिया था।

'मस्तिष्क टेलीविजन' की सहायता से अनु-



सन्धान कर्ता ऐसी महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं जैसे मस्तिष्क के बाहरी भाग में नियन्त्रित प्रतिफलनों के विकास को देख सकते हैं।

परीक्षक खरगोश के मस्तिष्क के ढांचे में पांच पंक्तियां देखते हैं जिन में हर एक में दस-दस चमत्कार बिन्दु हैं। परीक्षक खरगोश की आंखों के सामने बिजली की बत्ती जलाता है और तब बिजली की तरंग से उस के पंजे में उत्तेजना पैदा करता है। यह क्रिया बीसों बार दुहराई जाती है। अन्त में प्रकाश से खरगोश की पेशियों में उसी प्रकार सिकुड़न होती है जैसी बिजली से उस के पंजे में उत्तेजना पैदा करने से होती थी। इस प्रकार नियन्त्रित प्रतिफलन उत्पन्न किया जाता है। चमकते हुए बिन्दु बतलाते हैं कि खरगोश के दिमाग में यह प्रक्रिया कैसे होती है। प्रयोग के लिए पैदा की हुई गिल्टियों पर जैव तरङ्गों के साथ किए व्यावहारिक प्रयोग व्यावहारिक औषध के लिए महत्वपूर्ण है। खरगोश के मस्तिष्क में पैराफिन का एक टुकड़ा रखा गया। टेलीविजर के पर्दे पर हम देखते हैं कि मस्तिष्क के अन्य भागों की अपेक्षा बनावटी गिल्टी के ठीक आसपास बिन्दु अधिक तेजी से चमक उठते हैं। इस प्रकार 'मस्तिष्क टेलीविज़र' रोग-क्षेत्र या निर्द्धारण सम्भव कर देता है और वह निदान का उपयोगी ढङ्ग हो सकता है।

इस यन्त्र की सहायता से लीवानोव और अनान्येव ने पशुओं के शरीर पर रेडियो सक्रिय पदार्थों के प्रभाव के सम्बन्ध में अनेक अनुसंधान किए हैं। इन प्रयोगों के परिश्रमों का फिल्म बनाया गया है। परमाणु शक्ति के शान्तिकालीन उपयोगों के सम्बन्ध में जेनेवा में हुए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में यह फिल्म दिखायी गयी थी और इस ने विदेशों के वैज्ञानिकों में गहरी उत्सुकता उत्पन्न की। मस्तिष्क मे उत्तेजना और अवरोध की प्रक्रियाएँ इतनी तेजी से होती हैं कि आदमी की आंख पर्दे पर बिन्दुओं के दमकने का साथ नहीं दे सकतीं। तब सिनेमा यन्त्र की आंख अनुसन्धानकर्ता की सहायता करने आती है। वे इन प्रक्रियाओं की फिल्म बनाने के बाद मस्तिष्क की जैव तरङ्गों का अध्ययन करते हैं। वैज्ञानिक धीमी गति से एक के बाद अन्य रील का परीक्षण करते हैं और बारी-बारी से दमकते हुए बिन्दुओं को देखते जाते हैं। टेलीविजन प्रविधि की उपलब्धियों को काम में लाकर ऐसा यन्त्र तैयार करना बिलकुल सम्भव है जो मस्तिष्क के हजारों स्थानों की जैव तरङ्गों को ग्रहण कर सके। इस समय जैव तरङ्गों का अध्ययन इलेक्ट्रोड्स को सीधे मस्तिष्क में लगा कर या परीक्षा किए जाने वाले व्यक्ति के मस्तक पर लगा कर ही किया जा सकता है। भविष्य में विशेष प्रकार के रादर सेटों के द्वारा जैव तरङ्गों को ग्रहण करना सम्भव हो जायगा। उन जैव तरङ्गों का अध्ययन असाधारण दिलचस्पी की चीज है जो मस्तिष्क के केवल बाहरी भाग से नहीं आतीं, बल्कि भीतरी परतों से आती हैं। मानव भावावेगों, अनियंत्रित प्रतिफलनों तथा भीतरी अङ्गों के कार्य के विधिवत् अध्ययन के लिए यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

'मस्तिष्क टेलीविजर' की सहायता से होने वाले अनुसन्धान, औषधि विज्ञान, मनोविज्ञान, अध्यापन विज्ञान तथा ज्ञान की दूसरी शाखाओं की अनेक समस्याओं के समाधान में सहायक होते हैं। उदाहरण के लिए, मस्तिष्क की विभिन्न बीमारियों का निदान करना तथा उन बीमारियों में औषधियों के प्रभाव और उपचार के ढङ्गों का अध्ययन करना सम्भव हो जायगा।

अच्छी कल्पना शक्ति वाला व्यक्ति आसानी से समझ सकता है कि भावी 'मस्तिष्क टेलीविजर' में कैसी व्यापक सम्भावनाएँ निहित हैं। उन की रूप रेखा हम आज भी देख रहे हैं।

[—सोवियत भूमि।]

शान्तवर्ग के कुछ प्रसिद्ध शब्दों का सूक्ष्म भेद

श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

इस लेख में मैं शान्तवर्ग के निम्नलिखित प्रसिद्ध अंग्रेजी शब्दों के सूक्ष्म भेदों का विवेचन करते हुए उनके लिये उपयुक्त समानार्थक संस्कृत और हिन्दी के शब्दों को निश्चित करना चाहता हूँ।

Calm, tranquil, serene, placid, still, quiet, silent, noiseless, composed, collected.

ये शब्द शान्तवर्ग के हैं और प्रायः पर्याय-वाची ही समझे और इसी रूप में प्रयुक्त किये जाते हैं किन्तु वस्तुतः इन के अर्थों में अनेक सूक्ष्म भेद विद्यमान हैं, जिन का मैं संक्षेप से निर्देश पूर्ववत् Webster's Dictionary of Discriminated Synonyms तथा Standard Hand book of Synonyms, Antonyms and Prepositions by James C. Fernald आदि प्रामाणिक अङ्गरेजी कोषों के आधार पर करूंगा और उन को दृष्टि में रखते हुए उचित समानार्थक संस्कृत और हिन्दी शब्दों को दिखाने का प्रयत्न करूंगा। सब से पहले मैं Calm शब्द को लेता हूँ।

Calm=शान्तः; शान्त

अङ्गरेजी के 'काम' शब्द के लिये संस्कृत और हिन्दी में शान्त शब्द का प्रयोग होता है जो सर्वथा उचित है। बङ्गला, आसामी, मराठी, गुजराती, कन्नड़, तेलुगु, मलयालम, तामिल आदि प्रादेशिक भाषाओं में भी शान्त शब्द का प्रयोग होता है इसलिये निर्विवाद होने के कारण इस विषय में अधिक विवेचन की आवश्यकता नहीं।

Tranquil=प्रशान्तः, प्रशान्त

अङ्गरेजी के 'ट्रैंक्विल' शब्द का भी अर्थ प्रायः शान्त ही कर दिया जाता है और अनेक कोषों में उसे 'काम' का ही पर्यायवाची बतलाया गया है किन्तु उस का Calm (काम) से सूक्ष्म भेद वेब्स्टर् के उपर्युक्त पर्यायकोष में इन शब्दों में बताया गया है—

'Tranquil implies a more settled composure, a more inherent quiet than calm, with less suggestion of previous agitation overcome.'

(Webster's Dictionary of Discriminated Synonyms P. 139)

अर्थात् ट्रैंक्विल् शब्द में 'काम' शब्द की अपेक्षा अधिक स्थिर आन्तरिक शान्ति का भाव आता है और उस में पूर्व के किसी संघर्ष वा चञ्चलता पर विजय का निर्देश कम पाया जाता है। इस के लिये भी प्रायः प्रादेशिक भाषा कोषों में शान्त शब्द का प्रयोग पाया जाता है जिस के साथ निम्नलिखित अन्य शब्दों का भी उल्लेख है।

बंगला—शान्त, सुस्थिर, प्रशान्त।

आसामी शान्त, स्थिर, शान्तिपूर्ण।

कन्नड़—शान्त, अक्षुब्ध, निराकुल, एकरीतिय।

मराठी—स्वस्थ, स्थिर, अक्षुब्ध।

गुजराती शान्त, स्थिर, स्वस्थ।

तेलुगु—शान्तमैन (ऐन प्रत्यय है) चलन्त-लेनि, क्षोभमुलेनि (लेनि–निषेधात्मक)

मलयालम - प्रशान्तमाय (आय प्रत्यय है निश्चल-माय, स्तिमितमाय स्वस्थमाय, अक्षुब्ध-माय, शान्तात्मावाय।

हम ने उपर्युक्त सूक्ष्म भेद को दृष्टि में रखते हुए Tranquil के लिये 'प्रशान्त' शब्द को संस्कृत और हिन्दी में चुना है जिस का प्रयोग बंगला और मलयालम कोषों में भी पाया जाता है जैसे कि उपरिनिर्दिष्ट तालिका से स्पष्ट है।

अब मैं अंग्रेजी के 'Serene' (सीरीन्) शब्द को लेता हूँ।

Serene=सौम्यः, स्तिमितः, सात्विकः

सीरीन् शब्द के विषय में वैब्स्टर् ने अपने कोष में लिखा है कि –

Serene suggests a lofty and Unclouded tranquillity'(P.139)

अर्थात् सीरीन शब्द एक उच्च और निरभ्र, स्वच्छ वा विशद शान्ति का निर्देश करता है। फ़ैर्नाल्ड ने अपने कोष में इस विषय में लिखा है कि–

'The Serene spirit dwells as if in the clear upper air, above all storm and shadow.'

(Standard Hand book Of Synonyms by Fernald P. 106)

अर्थात् जब अङ्गरेजी में 'सीरीन् स्पिरिट्' शब्द का प्रयोग किया जाता है तो उस में यह भाव आता है कि जो मानो ऊपर की स्वच्छ वायु में आंधी और छाया से बिल्कुल ऊपर उठ कर निवास करती हो।

इन भावों को ध्यान में रखते हुए हम ने 'Serene' (सीरीन्) के लिये सौम्यः, सात्विकः, स्तिमितः इन शब्दों का संस्कृत और हिन्दी में प्रयोग उचित समझा है यद्यपि आकाश के साथ इस शब्द के प्रयोग के समय Serene sky के लिये निरभ्र या मेघमुक्त स्वच्छ आकाश शब्द का प्रयोग ही ठीक होगा। प्रादेशिक भाषा कोषों में से तेलुगु कोष में स्तिमित शब्द का प्रयोग सीरीन के समानार्थक के रूप में दिया है। उस को हिन्दी में कुछ कठिन समझा जाय तो सौम्य और सात्विक शब्दों का प्रयोग तो सुगमता से किया जा सकता है।

Placid=अक्षुब्धः, प्रसन्नचित्त, अनुद्विग्नः

अंग्रेजी के प्लैसिड् शब्द के विषय में वैब्स्टर् के कोष में लिखा है कि—

Placid connotes lack of excitement and suggests an unruffled and equable aspect or temper. (P,136)

अर्थात् प्लैसिड् शब्द उत्तेजना के अभाव को और अक्षुब्ध सम स्वभाव वा मनोवृत्ति को सूचित करता है। इस के लिये प्रादेशिक भाषा कोषों में निम्न प्रकार के शब्द पाये जाते हैं—

बं०—शान्त, धीर, प्रशान्त, अक्षुब्ध।

आ०–शान्त, धीर।

म०—शान्त, सौम्य।

गु०—सन्तोषी, शान्त, सौम्य।

क०—सौम्य, शान्त, प्रसन्न।

ते०—शान्तमैन, नेम्मदिगल।

मल०–शान्तमाय, प्रसन्नमाय, निराकुलमाय, प्रसन्नचित्तमाय,समाधानमुल्ल, प्रसन्नशीलमुल्ल्।

प्लैसिड् के ऊपर निर्दिष्ट विशेष भावों को दृष्टि में रखते हुए हम ने उस के लिये प्रसन्नचित्त और अक्षुब्ध इन दो शब्दों का प्रयोग उचित समझा है। इन में से 'अक्षुब्ध' का बंगला के कोषों में और 'प्रसन्नचित्त' और प्रसन्नशील का मलयालम के कोषों में विशेष निर्देश है।

Peaceful=शान्तिपूर्ण, पूर्णशान्तिमय।

अंग्रेजी का 'पीसफुल' शब्द सुप्रसिद्ध है जिस के विषय में वैब्स्टर् के कोष में लिखा है कि—

Peaceful implies repose or the attainment of undisturbed tranquility.' (P. 136)

अर्थात् 'पीसफुल' इस शब्द में विश्रान्ति अथवा विक्षोभ-रहित शान्ति की प्राप्ति का भाव

आता है। अतः इस के लिए शान्तिपूर्ण अथवा पूर्ण शान्तिमय शब्दों का संस्कृत और हिन्दी में प्रयोग सर्वथा उचित है। प्रादेशिक भाषाओं के कोषों में भी प्रायः इन्हीं दो अथवा इन से मिलते जुलते शब्दों का ही प्रयोग पाया जाता है। बंगला में शान्तिमय, आसामी में शान्तिपूर्ण, कन्नड़ में शान्तस्थितिय, तेलुगु में शान्तमैन, मलयालम में शान्तमाय, तामिल में शान्तमान ये शब्द एक ही प्रकार के हैं, प्रत्ययादि का स्वल्प भेद है। तेलुगु में एक सुन्दर शब्द 'कलहविमुख' इसी अर्थ में दिया गया है जिसे ग्रहण किया जा सकता है।

Still=निश्चल नीरव

'स्टिल्' के विषय में वैब्स्टर् के कोष में लिखा है कि—

'Still applies to that which is motionless or at rest, often with the further implication of hush or absence of sound.' (P. 788)

अर्थात् स्टिल् में निश्चलता और प्रायः निश्शब्दता का भाव आता है। इस के लिये निश्चल नीरव शब्द का प्रयोग करना उचित है।

Quiet=अचञ्चल, निरुपद्रवः, विश्रान्तिपूर्ण.

अङ्गरेजी के कायट् शब्द में जो भाव आता है उस का निर्देश वैब्स्टर् के विवेकपूर्ण पर्यायकोष में इन शब्दों में किया गया है।

'Quiet like still may imply absence of perceptible motion or sound, or of both, but it carries stronger suggestions of lack of excitement, agitation or turbulence, and of deep tranquillity, serenity restfulness or repose.' (P. 788)

अर्थात् कायट् शब्द में 'स्टिल्' की तरह स्पष्टगति, शब्द या दोनों की रहितता का भाव आ सकता है किन्तु इस में उत्तेजना चञ्चलता और उपद्रव के अभाव तथा गम्भीर प्रशान्तता, सौम्यता और विश्रान्ति का प्रबलतर निर्देश है।

इन भावों को ध्यान में रखते हुए हम ने अपने सर्वोपयोगी कोष में उस के लिये संस्कृत और हिन्दी में अचञ्चल, निरुपद्रव और विश्रांतिपूर्ण शब्दों का प्रयोग उचित समझा है। प्रादेशिक भाषाओं के कोषों में शांतवर्ग के इन शब्दों का सूक्ष्म भेद विवेचन न करते हुए प्रायः सब शब्दों को पर्यायवाची माना गया है तथापि बंगला में कायट् के लिये प्रशांत, उपद्रवशून्य, निस्तब्ध, आसामी में शांतनीरव, निस्तब्ध, कन्नड़ में संज्ञावाची कायट् के लिये विश्रांति, निश्चिन्तते मनःशांति, मलयालम में अव्याकुलमाय. मृदुवाय, अचञ्चलमाय, अनुपममाय इत्यादि शब्दों का प्रयोग पाया जाता है जो उपर्युक्त भावों को ही अधिकतर प्रकट करते हैं।

Silent=नीरवः, मौनपूर्णः, Noiseless=कोलाहल रहितः, निश्शब्दः।

साइलेन्ट् और नौयज़लैस् (Noiseless) इन शब्दों के विषय में वैब्स्टर् ने अपने कोष में बताया है कि—

'Silent and noiseless differ from the other words of this group frequently applied to motion, movement, stir or the like, that is unaccompanied by sound. Silent usually carries more positive suggestions of stillness or quietness whereas noiseless usually connotes absence of commotion or of sounds of acti-

vity or movement.' (Webster's Dictionary of Synonyms P. 788)

अर्थात् साइलेन्ट् और नौयज़लेस इन का इस वर्ग के अन्य शब्दों से भेद इस बात में है कि इन में प्रायः ऐसी गति वा चेष्टा का भाव आता है जिस के साथ शब्द न मिला हुआ हो। 'साइलेन्ट' में प्रशांतता और अचञ्चलता वा विश्रांति का प्रबलतर निर्देश होना है जब कि Noiseless में क्षोभ तथा क्रियाशीलता वा गति के अभाव की प्रधानता होती है। इस भेद को दृष्टि में रखते हुए हम ने Silent के लिये नीरव तथा मौनपूर्ण इन शब्दों को और Noiseless के लिये कोलाहलरहित और निश्शब्द इन शब्दों को संस्कृत और हिन्दी में चुना है।

Composed=शांतचित्तः

अङ्गरेज़ी के कम्पोज़ड शब्द के विषय में जैम्स फर्नाल्ड ने अपने सुप्रसिद्ध कोष में लिखा है कि--

'One is composed who has subdued excited feeling'(Standard Hand book of Synonyms by James fernald P. 106)

अर्थात् कम्पोज़ड शब्द का प्रयोग उस मनुष्य के लिये होता है जिस ने अपने आवेश वा उत्तेजनापूर्ण भाव को जीत लिया और इस प्रकार जो शांतचित्त हो गया हो। अतः इस के लिये हम ने 'शांतचित्त' शब्द के प्रयोग को संस्कृत और हिन्दी में उपयुक्त समझा है। बंगला, आसामी, गुजराती, मराठी, कन्नड़ तेलुगु, मलयालम इन प्रादेशिक भाषाओं में Composed के लिये शांत शब्द का उल्लेख किया गया है।

Collected=समाहितचित्तः, स्थिरचित्तः

अङ्गरेज़ी के Collected कौलेक्टेड्) शब्द के विषय में जेम्स फर्नाल्ड ने अपने उपरिनिर्दिष्ट कोष में लिखा है—

'He is collected when he has every thought, feeling or perception awake and at command.' (Standard Handbook of Synonyms by James fernald P. 107)

अर्थात् उस व्यक्ति के लिये Collected (कौलेक्टेड) शब्द का प्रयोग होता है जो प्रत्येक विचार, अनुभूति और वेदना को अपने निरीक्षण और अधीनता में रखता हो। इस के लिये प्रादेशिक भाषा कोशों में निम्न शब्दों का प्रयोग पाया जाता है—

बं०—स्थिर, स्थिरचित्त, शान्त
म०—स्थिरचित्त, स्वस्थचित्त
क०—स्थिरचित्तावुल्ल, मनःक्षोभेयिल्लद, समाहित, शान्त।
ते०—collectedness=मनः स्थैर्यमु।

Collected के अन्य शब्दों से सूक्ष्मभेद और उस की प्रधान भावना को ध्यान में रखते हुए हम ने उस के लिये संस्कृत और हिन्दी में 'समाहितचित्त और स्थिरचित्त' इन शब्दों को चुना है जिन का बंगला, मराठी, कन्नड़ आदि प्रादेशिक भाषाओं में भी प्रयोग होता है।

इस शान्तवर्ग के प्रसिद्ध अङ्गरेज़ी शब्दों के इस सूक्ष्म भेद विवेचन को मैं यहां समाप्त करता हूँ। आशा है विद्वान् इससे लाभ उठायेंगे।

★

भारत की मौलिक एकता का आधार

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

अंग्रेजों ने गत २०० वर्षों में भारतवर्ष के सम्बन्ध में जो वर्णनात्मक और विवेचनात्मक लेख लिखे, उनकी तान प्रायः इस बात पर टूटती थी कि वस्तुतः भारत कोई एक देश नहीं है। इस देश को देख कर वे इस परिणाम पर पहुँचते थे कि न यहां एक धर्म है और न एक भाषा। न एक वेश है और न एक से रीति रिवाज। इस आधार पर उनकी सम्मति बन गई थी कि भारतीय एकता एक वहम मात्र है। वे लिखते थे कि न भारत कभी एक रहा और न कभी रहेगा, वह केवल दासता की जंजीरों से बंधा रह कर ही एक बना रह सकता है। जिस दिन उस पर से दासता की जंजीरें खुल जायेंगी, एकता का ढोंग समाप्त हो जायगा और देश टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।

अनेक अंग्रेज इतिहास-लेखकों ने भारत की मौलिक अनेकता पर पुस्तकें लिखी थीं। जिन्हें भारत से कुछ हमदर्दी थी, ऐसे अंग्रेज लेखक भी यह लिख कर सन्तोष कर लेते थे कि भारत का भला ब्रिटिश साम्राज्य का हिस्सा बन कर रहने में ही है। अंग्रेजों के इस प्रकार के प्रचार से बहुत से अंग्रेजी शिक्षा में निष्णात भारतवासी भी यही मानते और लिखते थे कि भारत का और इङ्गलैंड का संयोग विधाता की कृपा से हुआ है। वे भी मानने लगे थे कि भारत न कभी एक हुआ और न होगा, क्योंकि उसे एकता में पिरोने वाला कोई सूत्र नहीं है।

अंग्रेजों का वैसा सोचना उचित भी था। उन्हें स्वयं अपनी सफलता पर आश्चर्य हो रहा था। वे भारत में व्यापार करने के लिये प्रार्थी बन कर आये और मालिक बन गये। भारत पर विजय प्राप्त करने में उन्हें अधिक कष्ट नहीं हुआ, क्योंकि वे भारतवासियों को आपस में ही लड़ा कर विजयी होने में सफल हो गये। यह कहना गलत है कि अंग्रेजों ने हिन्दुस्तानियों को जीता। इतिहास बतलाता है कि हिन्दुस्तानियों ने ही हिन्दुस्तान को जीत कर अंग्रेजों के अर्पण किया। ऐसी दशा में अंग्रेजों का यह सोचना स्वाभाविक ही था कि हिन्दुस्तान कोई एक देश नहीं है। वह जातियों का, धर्मों का, भाषाओं का और रीति रिवाजों का एक जमघट है, जिसे भौगोलिक परिस्थितियों ने एक कोठरी में बन्द कर दिया है। अपनी अद्भुत सफलता का कारण तलाश करने पर वे इसी परिणाम पर पहुँच सकते थे कि भारतवासी दासता के लिये ही पैदा हुए हैं। क्योंकि वह एक राष्ट्र नहीं, अतएव वे स्वतन्त्र भी नहीं हो सकते।

अंग्रेज तो अपनी आसान सफलता पर आश्चर्यित हो कर उपर्युक्त परिणाम पर पहुंचे और अंग्रेजी पढ़े लिखे हिन्दुस्तानी मानसिक दासता के कारण उन के अनुगामी हो गये। मैसमिरेजम इसी को कहते हैं। लगभग डेढ़सौ साल तक भारतवासियों के मस्तिष्क पर अंग्रेजों के मैसमिरेजम का असर रहा। वे अंग्रेजों के मन से ही सोचते थे और अंग्रेजों की जुबान से ही बोलते थे।

भारतवर्ष की मौलिक अनेकता की कल्पना छिन्न-भिन्न हो गई, जब २० वीं शताब्दी के आरम्भ में राष्ट्रीयता की लहर देश के एक कोने से दूसरे कोने तक फैल गई, अङ्गरेजों को और उनके शिष्यों को यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि पेशावर से लेकर रामेश्वरम् तक और पश्चिमी

घाट से लेकर पूर्वी घाट तक एक ही ज्वाला जल उठी। जो लोग यह समझे बैठे थे कि भारत में एकता कभी हो ही नहीं सकती, वह देश के सब प्रान्तों के निवासियों को भिन्न भाषाओं में, परन्तु एक ही स्वर में देश की स्वाधीनता का नारा लगाते हुए सुन कर अचम्भे में आ गये। अंग्रेज सरकार यह देख कर घबरा उठी कि जिन कल्पनाओं के आधार पर वह भारत की गद्दी पर आराम से बैठी हुई थी, वे टूटती जा रही हैं। अंग्रेज सरकार ने और अंग्रेज जाति ने अपनी प्रभुता को स्थिर रखने का भरसक प्रयत्न किया। साम दाम दण्ड भेद सभी उपायों से काम लिया; परन्तु वह राष्ट्रीय एकता की ज्वाला न बुझी, जिस से अन्त में अंग्रेजी साम्राज्य को भारत की सीमाओं से निकल जाना पड़ा।

इस ऐतिहासिक परम्परा पर गम्भीरता से विचार करें, तो एक प्रश्न उत्पन्न होता है। यदि भारत एक था तो वह पराधीन क्यों हुआ ? और यदि वह एक नहीं था तो एक ही भावना से प्रेरित होकर स्वाधीन कैसे हो गया ? इसे हम इतिहास के तत्वज्ञान का एक महत्वपूर्ण प्रश्न कह सकते हैं।

इस प्रश्न का उत्तर ढूंढने के लिये हमें भारत के पूरे इतिहास पर एक सरसरी दृष्टि डालनी पड़ेगी। भारत सदा से एक रहा है। आज से ५००० वर्ष पहले महाभारत में व्यास मुनि ने भारत का वर्णन निम्नलिखित श्लोक से आरम्भ किया था—

अत्र ते कीर्तयिष्यामि वर्षं भारत भारतम्,
प्रियमिन्द्रस्य देवस्य मनोर्वैवस्वतस्य च ।

अब यहां मैं स्वर्ग के राजा इन्द्र और पृथ्वी के राजा वैवस्वत मनु के प्यारे भारतवर्ष का वर्णन करता हूँ। इसके आगे व्यास मुनि ने अपने समय से पूर्व भारतवर्ष में हुए अनेक चक्रवर्ती राजाओं के नामों का उल्लेख किया है, जिसका अभिप्राय यह है कि उस समय छोटे छोटे अनेक राजाओं के होते हुये भी भारतवर्ष एक ही देश था।

विष्णुपुराण का निम्नलिखित श्लोक भी उसी परम्परा का द्योतक है।

गायन्ति देवाः किल गीतकानि
धन्यास्तु ते भारतभूमि भागे।
स्वर्गापवर्गास्पदहेतुभूते,
भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्।
विष्णु पुराण।

'देवता भी स्वर्ग में यह गीत गाते हैं, धन्य हैं वे लोग जो भारत भूमि में उत्पन्न हुए हैं। वह भूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है, क्योंकि वहां स्वर्ग और अपवर्ग दोनों की साधना हो सकती है। देवता लोग भी भारत भूमि में उत्पन्न होने की कामना रखते हैं, जिससे वे अपवर्ग प्राप्त करने का उपाय कर सकें।'

उस समय की परम्परा का अधिक स्पष्टीकरण वायु पुराण में किया गया है। उसमें भारत की सीमाओं का निम्नलिखित वर्णन है—

उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमवद्दक्षिणं च यत्,
वर्षं यद् भारतं नाम यत्रेयं भारती प्रजा।
वायु पुराण।

जो हिमालय के दक्षिण और समुद्र के उत्तर में है उस वर्ष 'देश' का नाम भारत है। उसकी प्रजा भारतीय प्रजा कहलाती है। वायु पुराण में 'भारत' शब्द की जो व्याख्या की है, वह भी अङ्कित करने योग्य है। वायु पुराण का श्लोक है—

भरणाच्च प्रजानां वै मनुर्भरत उच्यते,
निरुक्त वचनाच्चैव वर्षं तद् भारतं स्मृतम्।

प्रजा का भरण करने के कारण मनु की एक संज्ञा भरत भी है। इसी निर्वचन के कारण मनु का देश भारत कहा जाता है। 'भारतवर्ष' शब्द

की यह व्युत्पत्ति भी सम्भव है।

ऊपर दिये सब उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता कि प्राचीन समय में भारत की मौलिक एकता स्वतः सिद्ध मानी जाती थी। उसे सिद्ध करने के लिये किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं थी। अनेक छोटे-छोटे राज्य अथवा गणतंत्रों के रहते भी यह देश एक था और इस लिये भारतीय राष्ट्र भी एक था। उसी का नाम 'भारती प्रजा' था।

महाराज युधिष्ठिर ने दिग्विजय करने के पश्चात् जो राजसूय यज्ञ किया, उस में युधिष्ठिर का अभिनन्दन करते हुए भीष्म पितामह ने कहा था— एतद्‌दृढ गुरुभार भारतं,
वर्षमद्य तव वर्तते वशे।

यद्यपि यह पद माघ काव्य में आया है, तो भी इसे हम इस देश की परम्परा का सूचक मान सकते हैं। भीष्म पितामह कहते हैं, 'हे साम्राज्य का बोझ उठाने वाले राजन आज यह सारा भारत तुम्हारे वश में है।'

समय बदल गया और परिस्थितियां भी बदल गईं। राज्यों के और उन पर राज्य करने वाले वंशों के नामों में भी परिवर्तन आ गया। परन्तु इस देश की मौलिक एकता में परिवर्तन नहीं आया, जब पारसी लोगों का इस देश से सम्पर्क हुआ तो उन्होंने सिन्धु नदी के नाम पर इस देश को हिन्दुस्तान कहना आरम्भ किया। वह नया नामकरण भी सारे देश का ही हुआ। यूनानियों ने सिकन्दर के समय भारत में आकर उसे इन्डोस नाम से पुकारा। वह भी सारे देश का ही नाम रक्खा गया। मुसलमानों ने भी पारसियों के रक्खे हुए नाम को अपनी भाषा में प्रयुक्त किया। मुसलमान काल में भी 'हिन्दुस्तान' शब्द से सारे देश की ही सूचना मिलती थी। मुगल बादशाह अपने काल में इसी प्रयत्न में लगे रहे कि किसी तरह सारे हिन्दुस्तान के हाकिम बने और अन्त में भारत की अनेकताका राग अलापने वाले अंग्रेजों ने भी सारे देश पर प्रभुत्व कायम करके ही दम लिया। इङ्गलैंड का बादशाह इण्डिया का सम्राट कहलाता था। जिस का अभिप्राय यह था कि भारत की मौलिक एकता को अंग्रेज भी स्वीकार करते थे।

इस देश की मौलिक एकता का सब से पुष्ट प्रमाण यही है कि चक्रवर्ती राजा आये और चले गये, युगों पर युग बीत गये, नये-नये विजेताओं ने इस एकता को कई वार तोड़ने-फोड़ने का यत्न किया, परन्तु भारत की एकता नष्ट न हुई। नाम भी बदल गये, परन्तु नामी एक ही रहा। अनेक खंडों से बना होने पर भी भारत अखंड रहा। अब भी अँग्रेजों ने भारत छोड़ते हुये भारतवासियों को जो सब से अन्तिम उपहार दिया है, वह देश के विभाजन का है। हमें राजनीति के धुरन्धर पंडित यह विश्वास दिलाना चाहते हैं कि यह विभाजन अमिट है, भारत और पाकिस्तान कभी एक न होंगे, भारत का शरीर हमेशा के लिये दो भागों में बंट गया है, उसके एक होने का स्वप्न लेना व्यर्थ है। ऐसे अदूरदर्शी लोगों का उत्तर इतिहास के पृष्ठों में पड़ा हुआ है। भारतवर्ष एक था, एक है और एक रहेगा। उस की मौलिक एकता में बाधायें डाली जा सकती हैं, परन्तु वह न कभी नष्ट हुई और न भविष्य में नष्ट होगी।

मधु द्वारा चिकित्सा

डा० एदवार्द कान्देल एम. एस-सी.

हाल ही में मैं मास्को के एक चिकित्सालय में गया हुआ था और वहां रोगियों को एक प्रकार की दवा देते देखा। प्रायः दवाओं का स्वाद कड़वा होता है, पर इस गाढ़े, सुगन्धित, फीके अम्बर रंग के द्रव पदार्थ को रोगीगण बड़ी प्रसन्नता से गटक जाते थे। यह दवा थी मधु



जिसे साधारण-जन बहुत दिनों से बीमारियों में प्रयोग करते आ रहे हैं। इस के उत्कृष्ट निरामयकारी गुणों के बारे में मानवजाति को शताब्दियों से पता है। चिरकाल से ही तथा प्राचीन मिस्र की चित्रलिपियों में शहद के गुणकारी प्रभावों का वर्णन किया गया है। प्राचीन यूनान की दंतकथाओं में देवताओं के भोजन एम्ब्रोसिया की, जो मधु से ही बनता था, भूरी-भूरी प्रशंसा की गयी है। प्राचीन काल के महान् हकीम तथा 'चिकित्साशास्त्र के पिता' हिप्पोक्रेटीस १०७ वर्ष की अवस्था तक जिये। वे सदा मधु का सेवन करते थे और उसी से अनेक बीमारियों का भी इलाज करते थे।

सारे इतिहास में रूस अपने शहद के लिए जो दुनिया में सर्वश्रेष्ठ है, प्रसिद्ध रहा है। प्राचीन वीर-गाथाओं में जन-कथाओं के युद्ध में आहत होने वाले नायकों को 'सौ वर्ष पुराने' मधु से चंगा किये जाने के चमत्कारों का प्रसंग है। इतिहासकार नेस्टर के जो ११ वीं शताब्दी में हुआ था, ऐतिहासिक विवरणों में हम रूस में मधुमक्खीपालन में प्राप्त उच्चस्तरीय प्रवीणता का वर्णन पाते हैं। उस प्राचीन काल में ही रूसी मधु का भिन्न-भिन्न देशों को विस्तृत रूप से निर्यात होता था।

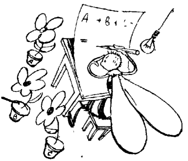
मधु एक असाधारण रूप से संश्लिष्ट सत है जिसे हजारों मधुमक्खियाँ लाखों फूलों और पौधों से—इन में अनेक बूटियाँ भी होती हैं—तैयार करती हैं। यह सत ऐसे ढंग से तैयार होता है कि मानवनिर्मित कोई प्रयोगशाला उस की नकल नहीं कर सकती। मधु तैयार करने में मधुमक्खियों के अध्यवसाय पर वास्तव में दाँतों-तले अंगुली दबानी पड़ती है। मधुमक्खियों का एक परिवार एक ग्रीष्म ऋतु के अन्दर १५० किलोग्राम (१ किलोग्राम – लगभग १ सेर) तक मधु एकत्र कर लेता है। तो भी एक ग्राम मधु



तैयार करने के लिए एक मधुमक्खी को कई हजार फूलों का अमृत रस संचय करना पड़ता है। यद्यपि जनसाधारण की चिकित्साविधि में प्राचीन काल से ही मधु का उपयोग होता रहा है, आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान अपेक्षाकृत हाल में आकर इस के निरामयकारी गुणों में दिलचस्पी लेने लगा है। सोवियत शासनकाल में वैज्ञानिकों ने मानव-शरीर पर मधु के प्रभाव का सर्वाङ्गीण अध्ययन किया और उस से विभिन्न रोगों की चिकित्सा कर आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त किये। सभी जानते हैं कि खाने के सामान अधिक दिन रखने से खराब हो जाते हैं। पर क्या कोई ऐसा भी खाद्य पदार्थ है जो मान लीजिए हजार वर्ष तक बिना सड़े रह सकता है? हाँ, एक ऐसा भी खाद्य-पदार्थ है। अधिक दिन नहीं, यही सन् १६२३ की बात है कि वैज्ञानिकगण मिस्र के फराओ तूतेन-खामेन के पिरामिड में घुसे। वहाँ उन्हें एक पात्र मधु मिला जो ३३०० वर्षों में भी नहीं बिगड़ा था। इस का कारण यह है कि मधु में मूल्यवान कीटाणुनाशक गुण हैं। उस में अनेक रोगजनक कीटाणुओं (हीमोलिथिक स्ट्रेप्टोकोकी, धनुष-टंकार के कीटाणु तथा अन्य) और विभिन्न प्रकार के शरीर-छत्रकों को मार डालने की सक्रिय क्षमता है। उपर्युक्त तथ्य को साधारण इलाज न सुनने वाले क्लेदरसयुक्त ज़ख्मों और जलने के घावों की मधु-चिकित्सा का आधार बनाया गया। मधु की पट्टी लगा देने से घाव और व्रण शीघ्रता से साफ हो गए और भरने लगे।

उस चिकित्सालय में, जिस के प्रधान प्रोफेसर उदिन्त्सेव हैं, फुफ्फुसीय क्षय के रोगियों के एक दल की मधु-द्वारा चिकित्सा की गयी। महीने भर के दौरान प्रत्येक रोगी को दिन भर में १००-१५० किलोग्राम मधु दिया जाता था। रोगियों का वज़न बढ़ गया, खाँसी घट गयी, तबियत पहले से कहीं अच्छी लगने लगी और रक्तरचना में सुधार आया। प्रसंगवश कह दें कि मधु का रक्त रचना पर बड़ा गुणकारी प्रभाव पड़ता है। उस से रक्त के हेमोग्लोबिन तत्व में प्रचुर वृद्धि हो जाती है।

पेट के अन्दर के व्रणों का मधु से इलाज करने पर आशाप्रद फल प्राप्त हुए हैं। मधु से फालतू अम्ल-पित्त में, जो पेट के व्रण की विशेषता है, कमी आ जाती है और वह एक मूल्यवान पथ्य-सम्बन्धी पदार्थ है। मास्को-पोषक-आहार-संस्था द्वारा प्रस्तुत पथ्य की एक विशेष नियमावलि के अनुसार पेट के व्रण के रोगियों को प्रतिदिन १०० ग्राम मधु दिया गया। इस से दर्द, मिचली और अम्ल-पित्त बहुत जल्दी दूर हो गए।



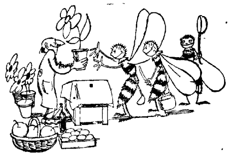
सभी जानते हैं कि मधु कई प्रकार का होता है। बाह्य रूप में ही नहीं, स्वाद में भी इन में भिन्नता होती है। जिन पौधों से मधुमक्खी मधु-संचय करती है उन्हीं के नामों के अनुसार उसके विविध प्रकारों के भी नाम होते हैं। हम नींबू, बबूल, मेथी, अखरोट तथा अन्य प्रकार के शहदों के नामों से परिचित हैं।

सोवियत वैज्ञानिक डा० इओइरिश एम० एस-सी० ने यह गवेषणा आरम्भ की कि क्या मनुष्य के आदेश पर मधुमक्खियों से विभिन्न प्रकार के मधु तैयार कराये जा सकते हैं ? क्या मधु की तैयारी में विशिष्ट औषधीय पदार्थों और विटामिनों का समावेश कराया जा सकता है ?

अनेक प्रयोगों के बाद इस वैज्ञानिक ने औषधीय बहु विटामिनयुक्त मधु प्राप्त करने की एक नवीन द्रुत प्रणाली का पता लगाया। कई वर्षों के कार्य के फलस्वरूप ८३ नए प्रकार के मधु प्राप्त किये गए। इन विभिन्न प्रकारों में भिन्न-भिन्न औषधियां रहती हैं, विटामिन ए. बी और सी तथा एटोफेन, थाइरोइडिन, आदि।

नयी प्रणाली का सार क्या है ? पहले मधुमक्खियों को फूले पौधों की खोज में मीलों की उड़ान करनी पड़ती थी। किन्तु अब यों कहें कि उन्हें 'कृत्रिम भोजन' प्राप्त होता है। छत्तों में विशेष मीठे घोलों से भरे भोजन के आले रखे रहते हैं। घोलों में विभिन्न पदार्थ—अण्डा, दूध, फल और सब्जी के रस तथा विभिन्न औषधीय द्रव्य मिला दिये जाते हैं। नवीन द्रुत प्रणाली द्वारा उपलब्ध बहु विटामिनीय अथवा एक विटामिन वाले मधु के नमूने उच्चस्तरीय विटामिन सक्रियता प्रदर्शित करते हैं।

नवीन प्रणाली के फलस्वरूप जो हमारे देश में अधिकाधिक व्यापक होती जा रही है—हम वर्ष में कभी भी, यहां तक कि जाड़े में भी, वांछित रचना वाला मधु प्राप्त कर सकते हैं। इस से मधु के औषधीय उपयोग की नयी सम्भावनाएं उपस्थित हो गयी हैं।



❀

सब्जियों में विटामिन युक्त पदार्थ

देसी सब्जियों और फलों में विटामिन युक्त पदार्थों की खोज करते हुए नयी दिल्ली के लेडी इरविन कालिज की प्राध्यापिका डा० कुमारी पुरी ने पता लगाया है कि पोइ, मेथी, पोदीने, बथुए, चौलाई, सरसों, सोये और पालक के सागों में दो महत्वपूर्ण विटामिन 'पी' और 'के' तथा लोहा, चूना और फास्फोरस होता है। चुकन्दर, बैंगन, धनिये, प्याज, शकरकन्दी, गोभी, आंवले, मटर, बन्दगोभी और कश्मीर तथा कुल्लु के सेब में भी विटामिन युक्त पदार्थ होते हैं। यह खोज इस कारण और भी महत्व रखती है कि विटामिन 'पी' हृदय रोगों और रक्तचाप में गुणकारी रहता है।

—

कन्नौज और उज्जैन में ३००० वर्ष पुरानी बस्तियां

भारत सरकार के पुरातत्व विभाग ने हाल में भारत के दो प्राचीन नगरों कन्नौज (उत्तर-प्रदेश) और उज्जैन (मध्यभारत) की खुदाई करायी। उस से पता चलता है कि पिछले ३००० वर्षों से आज तक इन दोनों स्थानों में बराबर मनुष्यों की बस्ती रही है।

महाभारत और अन्य संस्कृत ग्रंथों में कन्नौज का कौशस्थली, कान्यकुब्ज गाधिपुर और कुसुमपुरा आदि नामों से उल्लेख आता है। चीनी यात्रियों ने भी अपने यात्रा वृत्तान्तों में कन्नौज का वर्णन किया है। सम्भवतः हर्षवर्धन के समय कन्नौज उत्तर भारत में भारतीय संस्कृति का सब से बड़ा केन्द्र था।

काफी गहरी खुदाई करने पर जो मिट्टी के बर्तन मिले हैं, वे सम्भवतः प्रारम्भिक आर्य काल के हैं। इसी प्रकार के बर्तन उत्तर भारत के अन्य स्थानों में, जैसे अहिच्छत्र, हस्तिनापुर, कुरुक्षेत्र, इन्दरपत (दिल्ली), मथुरा आदि में भी पाये गये हैं। इस खुदाई में जो सामग्री मिली है, वह सम्भवतः १००० ई० पू० से ७०० ई० पू० की है।

यहां पर काले पालिश वाले बर्तन भी मिले हैं जो उत्तर भारत के अन्य सभी स्थानों में भी पाये जा चुके हैं। ये बर्तन छठी शती ई० पू० से दूसरी शती ई० पू० के हैं। इन से पता चलता है कि उस समय से आज तक यहां बराबर मनुष्य रहते आये हैं।

उसी टीले पर, थोड़ा और ऊपर, कुशन काल की भी वस्तुएं मिली हैं। कुशन काल और ईसवी सम्वत् समकालीन हैं। यहां जो वस्तुएं मिली हैं, उन में मिट्टी की मूर्तियां भी हैं। ऐसी ही मूर्तियां अहिच्छत्र, कौशाम्बी आदि में भी मिली हैं। यहां मकानों के जो अवशेष मिले हैं उन से पता चलता है कि उस समय के लोग पक्की ईटों के सुन्दर मकानों में रहते थे। यद्यपि यहां प्रारम्भिक मध्य युग के मनुष्यों की बस्ती के कोई निश्चित चिह्न नहीं मिले तो भी ब्राह्मण देवताओं की पत्थर पर खुदी हुई सुन्दर मूर्तियों से अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय भी यहां की जनता बहुत समृद्ध रही होगी।

उस काल में कन्नौज पहले गुर्जर-प्रतिहार वंश की और बाद में गहड़वाल वंश की राजधानी रहा। उत्तर-पश्चिम की ओर से भारत पर जितने आक्रमण हुए हैं, उनका कन्नौज हमेशा लक्ष्य रहा।

खुदाई की ऊपरी सतह में मिले लखौरी ईटों के बने हुए मकानों के अवशेषों और मध्यकालीन पालिश किये हुए मिट्टी के बर्तनों से पता चलता है कि मुस्लिम काल में भी यहां बस्ती थी।

उज्जैन के दुर्ग

उज्जैन की खुदाई में दूर-दूर तक फैले हुए दुर्ग मिले हैं जिन्हें वहां के निवासियों ने ६०० ई० पू० या उस से कुछ पहले बनवाया होगा।

उज्जैन का, जिस का पहला नाम उज्जयनी था, पुराणों से लेकर कालीदास के ग्रन्थों तक में विस्तृत वर्णन मिलता है। कालिदास के मेघदूत में उज्जैन के ऊंचे-ऊंचे भवनों का जिक्र आता है। कहा जाता है कि यहीं पर भगवान शिव ने एक शक्तिशाली दैत्य का वध किया था। उज्जैन अशोक के अवन्ती प्रान्त की राजधानी थी। यहां की दीवार सम्भवतः नगरवासियों ने नगर को सिपरा या क्षिप्रा नदी की बाढ़ से बचाने के लिए बनायी होगी। ऐसा लगता है कि उस समय इस नदी में अक्सर बाढ़ आती रहती थी।

यहां सब से पुरानी बस्ती ६०० ई० पू० या उस से कुछ पहले की मिली है। ऐसा प्रतीत होता है कि बाद की बस्तियों को सिपरा नदी की बाढ़ से बराबर हानि पहुँचती रही।

यद्यपि उज्जैन में मालवा की कांस्य पाषाण संस्कृति के पालिश किये हुए बर्तन नहीं मिले, पर पत्थर की कुछ ऐसी छोटी-मोटी चीजें मिली हैं, जिन से उज्जैन और मालवा की कांस्य पाषाण संस्कृति में समानता प्रकट होती है। यहां पर अभी और खुदाई की आवश्यकता है और केन्द्रीय पुरातत्व विभाग की खुदाई शाखा यहां अपना काम शुरु करने वाली है।



कन्नौज और उज्जैन की खुदाई से प्राप्त

- १९५५-५६ में जूट के माल के निर्यात से भारत ने १ अरब १८ करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा अर्जित की।
- भारत में प्रतिवर्ष लगभग ४,३६,५६,००० मन आलू पैदा होता है।
- जिला अस्पतालों में दन्त चिकित्सा के लिए दूसरी आयोजना में १ करोड़ ५१ लाख रुपये की व्यवस्था की गयी है। यह रकम राज्य सरकारों को सहायतार्थ दी जायगी।
- १९५५ में भारत में १,२०,००० रुपये की कागज बनाने की मशीनें तैयार की गयीं।

वर्षस्य सर्गा महयन्तु भूमिम्

श्री रामनाथ वेदालङ्कार

ग्रीष्म प्रचण्ड हो रहा था। भूमि तवा सी तप रही थी। ताल-सरोवर सूख गये थे। वृक्ष-वनस्पति कुम्हला रहे थे। किसान भूमि को खाली छोड़े हाथ पर हाथ धरे बैठे थे। तापतप्त देश-वासियों के मुखों से पुकार उठ रही थी—

समुत्पतन्तु प्रदिशो नभस्वतीः
समभ्राणि वातजूतानि यन्तु।
मह ऋषभस्य नदतो नभस्वतो
वाश्रा आपः पृथिवीं तर्पयन्तु॥

'दिशाएं उमड़ पड़ें, मानसून से लाई हुई मेघ-घटायें आकाश में छा जायें। गड़गड़ाते बादलों की रिम-झिम करती हुई वर्षाएं पृथिवी को तृप्त करें।'

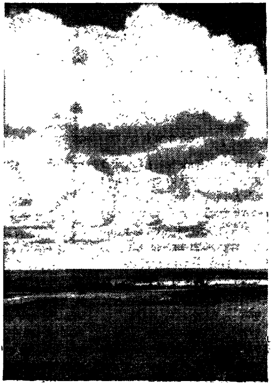
समीक्षयन्तु तविषाः सुदानवो
अपां रसा ओषधीभिःसचन्ताम्।
वर्षस्य सर्गा महयन्तु भूमिं
पृथग् जायन्तामोषधयो विश्व-
रूपाः॥

'दानी बादल अपनी बहार दिखायें। ओषधियाँ रसों से भर जायें। वर्षा की धाराओं से भूमि लहलहा उठे। चारों ओर रंगबिरंगी ओषधियाँ दृष्टिगोचर होने लगें।'

आशामाशां विद्योततां,
वाता वान्तु दिशो दिशः।
मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः,
सं यन्तु पृथिवीमनु॥

दिशा-दिशा में बिजलियाँ चमकें, दिशा-दिशा में शीतल हवाएँ चलें। वायुओं से प्रचालित मेघ आ-आ कर भूमि पर बरसें।'

कोटि-कोटि कण्ठों से निकली हुई पुकारें सफल हुईं। जलभरी मानसून पवनें प्रवाहित हो पड़ीं। गगन में घटाएं उमड़ने लगीं। मानवों की आशाभरी दृष्टि ऊपर उठी। प्रथम वर्षा की



गगन में घटाए उमड़ने लगीं



खेत पानी से भर गये। कृषक-बाल आनन्द मनाने लगे

फुहार ने भूमि का आलिंगन किया। किसानों ने हल उठाये। बैलों के कन्धों पर जुए सज गये। ट्रैक्टर भूमि से खिलवाड़ करने लगे। खेतों में जुताई आरम्भ हो गई। मकई, ज्वार, बाजरा आदि के बीजों ने भूमि की शरण ली। शनैः-शनैः फसलें अंकुरित हो कर बढ़ चलीं। एक बार फिर मानवकण्ठ की पुकार सुनाई दी—

महान्तं कोषमुदचा निषिञ्च
स्यन्दन्तां कुल्या विषिताः पुरस्तात्।
घृतेन द्यावापृथिवी व्युन्धि
सुप्रपाणं भवत्वघ्न्याभ्यः ॥

'हे पर्जन्य! अपने विशाल कोश को उठाये-उठाये फिर। उससे भूमि को सिंचित कर दो। चारों ओर नहरें निर्बन्ध हो कर प्रवाहित होने लगें। जल से द्यावापृथिवी को आर्द्र कर दे। गौ आदि पशुओं के पीने के लिए चारों ओर पानी ही पानी हो जाये।'

देखते ही देखते वर्षा की झड़ी लग गई। प्यासी धरती की तृषा शान्त हुई। खेत पानी से भर गये। वन-उपवन, तरु-गुल्म, गिरि-पर्वत सब वर्षा से स्नात हो गये। भूमि पर घास का मखमली गलीचा बिछ गया। सब ओर हरियाली ही हरियाली दिखाई देने लगी। पत्ती-पत्ती प्राण से पुलकित हो उठी। पुष्पित वनस्पतियों से भीनी-भीनी गन्ध उठने लगी। वृष्टि से स्नात हुई ओषधियाँ प्राण से संवाद करने लगीं—हे वृष्टि-जन्य प्राण! तूने हमारी आयु को बढ़ा दिया है, तूने हम सब को सुरभित कर दिया है;

अभिवृष्टा ओषधयः प्राणेन समवादिरन्।
आयुर्वै नः प्रातीतरः सर्वा नः सुरभीरकः ॥

जब वर्षा की एक एक धार के साथ भूमि पर प्राण की वृष्टि होने लगी तब पशुजगत् भी प्रमुदित हो उठा—अहा, अब तो हमारी मौज हो जायेगी, अब तो हम उत्सव मनायेंगे;

यदा प्राणो अभ्यवर्षीद् वर्षेण पृथिवीं महीम्।
पशवस्तत् प्रमोदन्ते महो वै नो भविष्यति॥

मेंडक भी प्रसन्नता को अपने अन्दर सीमित न रख सके। मौनव्रतधारी ब्राह्मणों के समान जो अब तक चुपचाप भूमि के अन्दर सोये पड़े थे वे अपने आनन्द को टर्र-टर्र ध्वनि द्वारा व्यक्त करने लगे,

संवत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिणः।
वाचं पर्जन्यजिन्वितां प्र मण्डूका अवादिषुः॥

अब तो किसानों की भी प्रसन्नता का पार नहीं। उन के खेत लहलहाने लगे हैं। वे खेतों में पहुँच उन का निरीक्षण कर रहे हैं, और फसल से होने वाली उत्पत्ति का अनुमान कर मन ही मन आनन्दमग्न हो रहे हैं। उन के बालक नग्नबदन हो वर्षास्नान का आनन्द लेते हुए उत्सव मना रहे हैं।

हे प्राणदायिनी वर्षा! हम भी तेरा अभिनन्दन करते हैं।



लहलहाते नारिकेल तरुओं से शोभित मलाबार तट

★

योगिराजश्रीकृष्णस्मरणम्

पं० धर्मदेवो विद्यामार्तण्डः

यो योगिराजः किल कर्मयोग-
मार्गस्य नेतृत्वमलंचकार ।
सद्धर्मसंरक्षणदत्तचित्तः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥१॥

ज्ञानी सुवीरः शुभगायको यो
गुणाकरः शाश्वतधर्मगोप्ता ।
तथाप्यहङ्कारलवेन हीनः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥२॥

परोपकारार्पितजीवितो यः
कंसादिदुष्टारिगणस्य हन्ता ।
गीतामृतं पाययिता प्रशस्तं
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥३॥

सन्ध्याग्निहोत्रादिककृत्यजातं
सन्निष्ठया यो विदधे ऽप्रमत्तः ।
देवेशभक्त्याधिगतप्रसादः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥४॥

आत्मा ऽविनाशी ह्यजरोऽमरो ऽयं
मृत्युस्तु वासःपरिवर्त एव ।
इत्यादितत्त्वं प्रदिशन् यथार्थं
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्य? ॥५॥

भूत्वेह लोके गुणसागरो ऽपि
यः पादपूजां विदधे द्विजानाम् ।
आसीत् सुहृद् यो धनवर्जितानां
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥६॥

विप्रे सुशीले विनयोपपन्ने
तथा श्वपाके शुनि गोगजेषु ।
समानदृष्टिं य इहादिदेश
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥७॥

आसीत् क्षमावान्धृतिमान् नयज्ञो
यो राजनीतौ कुशलोऽद्वितीयः ।
त्राता सतां पापिदलस्य नेता
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥८॥

क्लैब्यं प्रपन्नं युधि पार्थ शूरं
विसृज्य चापं विकलं स्थितं तम् ।
विबोध्य धर्मं विदधे सुवीरं
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥९॥

योगस्य यज्ञस्य सुखस्य शान्ते-
स्त्यागस्य तत्त्वं सुरसम्पदश्च ।
ज्ञानस्य भक्तेस्तपसो दिशन् नः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥१०॥

जातो ऽमरो दिव्यगुणैः स्वकीयै-
र्मतो जनैर्यो भगवानिवेह ।
यज्ञान्वितं जीवितमादधानः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥११॥

यदीयशिक्षा प्रददाति मोदं
स्फूर्तिं नवोत्साहबलं सुधैर्यम् ।
श्रद्धान्वितानां मनसां स सम्राट्
कृष्णो महात्मा न हि केन वन्द्यः? ॥१२॥

यो घातकायाशिष एव दत्वा
चकार शान्त्या परलोकयात्राम् ।
बभूव मुक्तः प्रभुतत्त्ववेत्ता
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥१३॥

संस्थाप्य साम्राज्यमधर्मनाशं
कर्तुं तथा धर्मविवर्धनाय ।
येन प्रयत्नो विहितो ऽभिवन्द्यः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥१३॥

यो मोहनः स्वीयगुणैः प्रशस्तैः
स्थितो जनानां हृदयेषु नित्यम् ।
निष्कामकर्माण्यकरोत्सदा यः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥१४॥

—

साहित्य-परिचय

[समालोचना के लिये प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ आनी आवश्यक हैं—सम्पादक]

'धर्मचक्र' बुद्ध-जयन्ती विशेषाङ्क

सम्पादक—प्रो० नारायण केशव भागवत सुगत—निधान १५ वां रास्ता प्लॉट नं० ४६३, खार, बम्बई २१. मूल्य १), पृष्ठ संख्या ४०+४० =८०, पत्र का वार्षिक मूल्य ५)।

श्री प्रो० नारायण केशव भागवत एम० ए० गत ३७ वर्षों से सेन्ट जेवियर कालेज बम्बई में पाली-विभाग अध्यक्ष हैं। वे पाली तथा बौद्धमत विषयक अपनी विद्वत्ता के लिये सम्पूर्ण भारत तथा विदेशों में ख्याति प्राप्त है। उनके सम्पादकत्व में धर्मचक्र नामक अंग्रेजी, मराठी, हिन्दी मासिक पत्र बम्बई से प्रकाशित होता है जिसका बुद्ध जयन्ती विशेषाङ्क हमारे सन्मुख है। इसमें अंग्रेजी, मराठी और हिन्दी में प्रधानतया महात्मा गौतम बुद्ध और उन की शिक्षाओं के विषय में प्रो० मेन्डौन्का, पूना के प्रो० जोशी, हौलैण्ड के कैप्टेन मुल्डर, श्री कारवनीस, श्री भोरटके, कुमारी मीनाक्षी एम० ए०, श्री धर्मानन्द कौसंबी, प्रो० शिवसहाय पाठक, श्री सुमेरुचन्द दिवाकर शास्त्री, राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज, प्रो० जयदेव बन्धु विद्यावाचस्पति तथा श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड के विद्वत्ता और भावपूर्ण लेख तथा कुछ संस्कृत और हिन्दी की अच्छी कविताएं प्रकाशित हुई हैं। बौद्ध ग्रन्थों से स्वाध्यायार्थ मङ्गलसुत्त, मेत्तसुत्त, भारद्वाजसुत्त आदि भी उधृत किये गये हैं, जिनसे महात्मा बुद्ध की सदाचारादि विषयक शिक्षाओं पर प्रकाश पड़ता है। श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड के 'क्या महात्मा बुद्ध नास्तिक थे?' इस मौलिक लेख में बौद्ध ग्रन्थों से अनेक स्पष्ट प्रमाण दे कर यह सिद्ध किया गया है कि महात्मा बुद्ध नास्तिक न थे प्रत्युत ब्रह्म, वेद, आत्मा पुनर्जन्मादि में विश्वास रखने वाले आर्य सुधारक थे जिन्होंने जन्मानुसार जातिभेद यज्ञों में पशु-हिंसादि अवैदिक और दुष्ट प्रथाओं का खंडन किया है। इस लेख को पढ़ कर प्रसिद्ध आर्यधर्म प्रेमी दानवीर सेठ जुगल किशोर बिरला ने, श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति को लिखा कि "क्या महात्मा बुद्ध नास्तिक थे? शीर्षक पं० धर्मदेव जी का लेख श्रेष्ठ और प्रमाण तथा तथ्यपूर्ण है। यथार्थ में बुद्ध बड़े से बड़े आर्य (हिन्दू) महात्मा थे।" इत्यादि।

प्रो० भागवत महात्मा बुद्ध विषयक इस वास्तविक दृष्टिकोण का 'धर्मचक्र' द्वारा प्रचार करना चाहते हैं अतः हम इसका विशेष रूप से अभिनन्दन करते हैं।

कहत शिवानन्द

लेखक श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती। प्रकाशक—योग वेदान्त आरण्य विश्वविद्यालय, शिवानन्द नगर, ऋषिकेश। आकार २० × ३० = १६, पृष्ठ संख्या ७२. प्रथम संस्करण १९५६, मूल्य १)।

शिवानन्दोपनिषद् दशकम्

लेखक तथा प्रकाशक वही। पृष्ठ संख्या २५१। मूल्य २॥)।

श्री स्वामी की एक अंग्रेजी पुस्तक का यह हिन्दी रूपान्तर है। १९३७ से अब तक इस के सात संस्करण हो चुके हैं। यही तथ्य इस पुस्तक की लोकप्रियता को बताता है।

प्रथम पुस्तक भी एक अंग्रेजी पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है। स्वामी जी ने इस में सत्य, सेवा, श्रद्धा ध्यान, चरित्र आदि पर अपने विचार प्रगट किये हैं। सद्गुणों को विकसित करने के मार्ग बताये हैं। —रामेश बेदी।

★

गुरुकुल में केन्द्र के शिक्षा-सचिव

१३ अगस्त को भारत सरकार के शिक्षा-मंत्रालय के प्रधान सचिव श्रीयुत सैयदेन महोदय गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय में पधारे। श्रद्धानन्द अतिथि-मन्दिर पर कुलपति श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति तथा अन्य गुरुजनों ने आप का पुष्पावलियों से स्वागत किया। कुलपति जी तथा अधिकारियों के साथ आप ने गुरुकुल के समस्त विभागों का कोई तीन घण्टे तक परिभ्रमण कर के बारीकी से अवलोकन किया।

आप के सम्मान में वेद-भवन में कुलवासियों की एक सभा समवेत हुई। कुलपति जी ने मान्य अतिथि का स्वागत करते हुए गुरुकुल की भावना, स्थापना तथा उस के कार्य का संक्षिप्त इतिहास बताया।

श्रीयुत सैयदेन साहब ने अपने भाषण में बताया कि इस शताब्दी के प्रारम्भ में भारत में शिक्षा विषयक प्रयत्नों के लिए अनेक संस्थायें प्रारम्भ हुई जिन में शान्ति-निकेतन, गुरुकुल काँगड़ी, काशी विद्यापीठ और जामिया मिल्लिया की सेवाएं अपना विशेष स्थान रखती हैं। इन संस्थाओं ने शिक्षा के भारतीय आदर्शों की ओर सर्वसामान्य जनता का व शिक्षा-विज्ञों का ध्यान आकृष्ट किया। समय की गति को पहिचानते हुए इन संस्थाओं ने उदारतापूर्वक नवीन विज्ञानों और विद्याओं को भी अपने पाठ्यक्रम में समावेश करते हुए नवीन और प्राचीन शिक्षा-विधि के समन्वय का सुन्दर नमूना पेश किया।

आगे आप ने कहा कि गुरु को केन्द्र में रख कर शिष्य की अन्तरात्मा में चरित्र और ज्ञान की ज्योति प्रबुद्ध करने की प्रक्रिया ही गुरुकुल शिक्षा का रहस्य है। इस मौलिक भावना को अभी हमें अपनी शिक्षा विधि में ठीक प्रकार से लागू करना होगा। गुरुकुलीय शिक्षा-विधि में विद्यमान व्यक्तित्व का विकास, हृदय की उदारता और चरित्र का निर्माण, ऐसे शुभ तत्व हैं जिन का हमें अपनी समस्त शिक्षा संस्थाओं में समावेश करना होगा। साथ ही हमें अपनी तालीम में रुहानी (आत्मिक) उन्नति का भी ख्याल रखना होगा। अंग्रेज दार्शनिक बर्ट्रेन्ड रसल ने जीवन में दो प्रकार के आनन्द बताये हैं। एक है निर्माण-मूलक आनन्द और दूसरा भौतिक वस्तुओं के अधिकार से प्राप्त होने वाला आनन्द। बच्चों के चरित्र-निर्माण द्वारा तथा ललित कलाओं द्वारा हमें निर्माण-प्रधान आनन्द प्राप्त होता है। हमने अपने जीवन में इस प्रकार के निर्माण-मूलक आनन्द को ही महत्व देना चाहिए। भौतिक वैभव के विलास तथा जमीन जायदाद के अधिकार से प्राप्त होने वाला आनन्द नगण्य है। कल्याणकारी राज्य के निर्माण के लिए हमें सेवाव्रत को तथा रचना-मूलक आनन्द को स्वीकार करना होगा। कविवर इकबाल की प्रसिद्ध कविता नया शिवालय का अवतरण प्रस्तुत करते हुए मान्य मेहमान ने प्रेम और उदारता की भावना को समृद्ध करने की प्रेरणा की।

इस के पश्चात् सायंकाल चार बजे मान्य अतिथि महोदय ने गुरुकुल विश्वविद्यालय में नवीन छात्रावास का शिलान्यास करते हुए आधुनिक भारत के शिक्षा के इतिहास में गुरुकुल काँगड़ी की देन के विषय में अपने निम्नलिखित उद्गार सम्मति पुस्तक में अङ्कित किए।

'इस ऐतिहासिक शिक्षा प्रतिष्ठान को देखने की मेरी चिर प्रतिज्ञात आकांक्षा आज पूर्ण हुई है। शिक्षाविज्ञों की कई पीढ़ियों के निष्काम पुरुषार्थ और प्रेम का यह एक स्मारक है। उन शिक्षाविज्ञों ने इस शिक्षणालय पर अपना विशिष्ट

(शेष ६४वें पृष्ठ पर)

गुरुकुल समाचार

ऋतु-रंग

सारा अगस्त मास बारिशों से आक्रांत रहा। अत्यधिक वर्षा से जनता ऊब गई थी। अशतः खेतो पर भी उस का कुप्रभाव पड़ने लगा था। परन्तु सितम्बर के प्रारम्भ होते-होते वर्षाएँ सर्वथा बन्द हैं। धूप-छाँह का खेल तो होता ही रहता है, पर जब आकाश निर्मेघ हो जाता है तब तीव्र ताप पड़ता है। उस पर भी यदि पवन का प्रवाह रुक जाय, तो वातावरण असह्य मालूम पड़ने लगता है। भाद्र के बेचैनी उपजाने वाले सायंकाल अपना पूरा प्रभाव दिखाते रहे हैं। रात के पिछले प्रहर शनैः शनैः शीतल होते जा रहे हैं। जिन्हें देख कर मालूम होता है कि शरत् काल अति समीप आ पहुँचा है। ऋतु बदलते ही कुछ प्रवासी पखेरू उड़ चले हैं और शरत कालीन पंछी आने लगे हैं। कोयल और पपीहे की पुकारें समाप्त हो रही हैं और शरद् दूत खंजनों की चहल-पहल प्रारम्भ हो रही है। पोखरों में कुँई और उद्यान कुञ्जों में चमेली महक उठी है। प्रभात में परिजात प्रसूनों की बहार प्रारम्भ हो चुकी है। ऋतु वैषम्य प्रारम्भ हो चुका है तथापि साधारण तथा कुलवासियों का स्वास्थ्य अच्छा है।

थाईलैण्ड के मान्य यात्री

थाईलैण्ड के नेवल अटैची श्री यू. सुन्दर-सीमा ट्रैडकमिश्नर श्री नोवा और थाई दूतावास के अधिकारी पी फांको आदि मान्य अधिकारियों ने गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय का अवलोकन किया। आप की मण्डली में वहाँ के भिक्षु सोम-यशोधर तथा भिक्षुणी नंदमाला भी थी। गुरुकुल की अतिथि पुस्तक में आपने अङ्कित किया है कि गुरुकुल भारतवर्ष का एक बढ़िया विद्याकेन्द्र है। स्मरण रहे कि थाईदेश के भिक्षु श्रीयुत् थतधम्म (स्थितधर्म) पिछले दो मास से गुरुकुल में रह कर संस्कृत और हिन्दी भाषा का अध्ययन कर रहे हैं—गुरुकुल के छात्र आप से पाली भाषा पढ़ते हैं।

इन के सिवाय पिछले दिनों मुम्बई की महापौरसभा (कार्पोरेशन) की अध्यक्षा (मेयर) श्रीमती सुलोचना मोदी जे. पी. और डाक्टर मोदी महाशय गुरुकुल में पधारे।

अभिनन्दन

माने हुए इतिहासज्ञ और कुल के प्रतिभा-वान स्नातक श्री जयचन्द्र विद्यालङ्कार को उन की 'भारतीय कृषि (संस्कृति) का खाका' नामक मौलिक और खोजपूर्ण पुस्तक पर ८००) रुपये का पुरस्कार पञ्जाब सरकार ने प्रदान किया है। समस्त कुलवासी इस उपलब्धि पर अपने विद्वान कुलबन्धु का सप्रेम अभिनन्दन करते हैं।

गोरक्षा पर १२००) रुपये का पुरस्कार

ठाकुरदत्त शर्मा धर्मार्थ ट्रस्ट देहरादून ने निश्चय किया है कि हमारी विषय सूची के अनुसार गोरक्षा पर हिन्दी या अंग्रेजी में पुस्तक छपा कर जो विद्वान सम्वत् २०१४ की वैशाखी तक हमारे पास भेजेंगे उन सभी विद्वानों की वे पुस्तके हम अपनी पुरस्कार समिति के पास भेज देंगे। उन में से समिति जिस एक पुस्तक को पुरस्कार योग्य निर्धारित करेगी उस के मान्य लेखक को एक प्रमाण-पत्र के साथ ठाकुरदत्त शर्मा धर्मार्थ ट्रस्ट १२००) रुपये पुरस्कार देगा। विषय सूची पत्र लिख कर मंगवाई जा सकती है।

—शङ्करदेव विद्यालङ्कार।

बेंत के नमूने

वन-अनुसन्धान-शाला, देहरादून की माइनर फौरेन्ट प्रोडक्ट्स शाखा में बेंत पर हाल ही में अन्वेषण कार्य आरम्भ हुआ है इसी शाखा में वर्षों तक अनुभव प्राप्त किए हुए एक विद्वान् अधिकारी श्री अनूकूल चन्द्र दे ने इस विषय का विशेष रूप से अध्ययन तथा अन्वेषण आरम्भ किया है। गुरुकुल संग्रहालय को इन्होंने अभी बेंत के कुछ नमूने भेंट किए हैं। देहरादून, मद्रास, त्रावणकोर, बम्बई आदि स्थानों में पैदा होने वाली बेंतों के नमूनों से ज्ञात होता है कि भारत में सर्वोत्तम प्रकार का बेंत पैदा हो सकता है। परन्तु हम हरसाल लगभग १० लाख का बेंत मलाया, इन्डोनेशिया, सिंगापुर आदि से आयात कर रहे हैं। विदेशों से आने वाला सब बेंत सिंगापुरी बेंत के नाम से आयात होता है। भारत में बेंत की पचास जातियाँ व उपजातियाँ उपलब्ध होती हैं। हमारे देश में बेंत की अधिकतम लम्बाई ३०० फीट होती है। अन्वेषकों के रिकॉर्ड में अधिकतम लम्बाई ६००० फीट बताई गई है। यह रिकॉर्ड बोर्नियो का है। हमें आशा करनी चाहिए कि हमारा देश भी शीघ्र ही लाखों ही नहीं करोड़ों रुपयों की बेंत पैदा करने में समर्थ हो सकेगा। फर्नीचर, छड़ी, खेल का सामान, हत्थे, टोकरियाँ आदि सैकड़ों प्रकार की चीजों में बेंत का प्रयोग संसार में सर्वत्र किया जा रहा है। हमारे देश में इस की पैदावार बढ़ने के साथ-साथ कुटीर उद्योगों में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जावेगा। हमारे आर्थिक ढांचे को एक नया रूप देने में बेंत अवश्य ही महत्त्वपूर्ण उपज सिद्ध होगी।

—रामेश बेदी।

गुरुकुल में केन्द्र के शिक्षा-सचिव

(६२ वें पृष्ठ का शेष)

प्रभाव डालते हुए, इस की एक निजी परम्परा स्थापित की है। इस शिक्षापीठ के अपने ही अभीप्सित आदर्श हैं। उन आदर्शों में संस्था ने कभी जड़ता नहीं आने दी है। प्रत्युत यह नवीन विचारों और प्रवृत्तियों को ग्रहण करने के लिए उद्यत रही है। संस्था की यह भावना स्पृहणीय है। मैं आशा करता हूँ, यह संस्था नवीन एवं अधिक उन्नत पद्धतियों के लिए स्फूर्ति देती रहेगी। मैं संस्था की सर्वप्रकार की सफलता चाहता हूँ।'